संस्कृत-
संजीवनी

द्वितीयो भागः

द्वादशवर्गीय संस्कृतस्य पाठ्यपुस्तकम्

सम्पादक

कमलाकान्त मिश्र

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण

फरवरी 2003

माघ 1924

ISBN 81-7450-067-7

PD 10T ML

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	निकट : धनकल बस स्टॉप
नई दिल्ली 110 016	बैंगलूर 560 085	अहमदाबाद 380 014	पनिहटी, कोलकाता 700 114

प्रकाशन सहयोग

संपादन : एम. लाल

उत्पादन : अतुल सक्सेना

राजेन्द्र चौहान

आवरण : बालकृष्ण

रु. 20

एन.सी.ई.आर.टी. वाटर मार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित ।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा नवटैक कंप्यूटर द्वारा लेज़र टाइपसैट होकर टैन प्रिंट्स (इं) प्रा. लि., 44 कि.मी. माईल्स स्टोन, नेशनल हाईवे, गाँव-रोहद, जिला-झज्जर, हरियाणा द्वारा मुद्रित।

पुरोवाक्

भारतीयशिक्षापद्धतौ संस्कृतस्य महत्त्वमुद्दिश्य विद्यालयेषु संस्कृतशिक्षणार्थम् आदर्शपाठ्यक्रम-पाठ्यपुस्तकादिसामग्रीविकासक्रमे राष्ट्रियशैक्षिकानुसंधान-प्रशिक्षणपरिषदः सामाजिकविज्ञानमानविकीशिक्षाविभागेन षष्ठवर्गादारभ्य द्वादशकक्षापर्यन्तं नवीनराष्ट्रियपाठ्यचर्यानुरूपम् आदर्शपाठ्यक्रमं निर्माय संस्कृतपाठ्यपुस्तकानि निर्मीयन्ते। अस्मिन्नेव क्रमे द्वादशवर्गीयच्छात्राणां कृते प्रमुखेभ्यः गद्य-पद्य-नाटक-ग्रन्थेभ्यः प्रतिनिधिभूतान् पाठ्यांशान् सङ्कलय्य भूमिका-टिप्पणी-प्रश्नाभ्यासादिभिः समलङ्कृत्य प्रकाश्यतेऽधुना **संस्कृत-संजीवनी (द्वितीयो भागः)** नाम पाठ्यपुस्तकम्। छात्राणां सौकर्याय पूर्वनिर्धारितानां गद्य-पद्य-नाटकानां कृते त्रयाणां पुस्तकानां स्थाने साम्प्रतमेकमेव पुस्तकमिदं विरचितम्। अत्र संस्कृतसाहित्यस्य विविधविधानां गद्य-पद्य-नाटकानां परिचयप्रदानेन सह छात्रेषु नैतिकमूल्य-विकासाय अपि प्रयत्नो विहितः।

पुस्तकस्यास्य प्रणयने यैः विशेषज्ञैः अनुभविभिः अध्यापकैश्च बहुमूल्यं परामर्शादिकं दत्त्वा सहयोगः कृतः, तान् सकलान् प्रति परिषदियं कृतज्ञतां प्रकटयति। पुस्तकमिदं छात्राणां कृते उपयुक्ततरं विधातुं सर्वेषामनुभविनां विदुषां शिक्षकाणां च सत्परामर्शाः सदैवास्माकं स्वागतार्हाः।

जगमोहनसिंहराजपूतः
निदेशकः
राष्ट्रियशैक्षिकानुसंधानप्रशिक्षणपरिषद्

नवदेहली
नवम्बर, 2002

भूमिका

संस्कृत विश्व की अत्यंत प्राचीन भाषा है। भारतीय संस्कृति का स्रोत यही भाषा है। इसमें न केवल हमारे प्राचीन उदात्त संस्कार निहित हैं, अपितु हमारा गंभीर शास्त्र-ज्ञान एवं पारलौकिक चिंतन भी इसी भाषा में उपलब्ध है। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में जितने ग्रंथ इस भाषा में लिखे गए हैं, उतने विश्व की अन्य किसी भी प्राचीन भाषा में नहीं मिलते। संस्कृत का साहित्य ऋग्वेद काल से लेकर आज तक अबाध गति से प्रवाहित होता रहा है। वेद, व्याकरण, ज्योतिष, छंद, निर्वचनशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति, ज्यामिति, षड्दर्शन आदि के साथ-साथ यह साहित्य कोमल काव्यानुभूतियों से ओत-प्रोत गद्य-पद्य की उर्वर जन्मभूमि है।

संस्कृत भाषा ने समस्त भारत की आधुनिक भाषाओं को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से पर्याप्त प्रभावित किया है। मध्यकाल में प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य को तो संस्कृत के बिना समझ पाना बहुत कठिन था। आधुनिक भारतीय साहित्य का अधिकांश भाग संस्कृत साहित्य की ही देन है। आधुनिक भारत की लगभग सभी भाषाओं ने संस्कृत भाषा से ही शब्दावली ग्रहण की है। विदेशों में भी संस्कृत की महत्ता बड़े आदर से स्वीकृत की गई है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में संस्कृत भाषा का सम्यक् अनुशीलन हो रहा है।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से संस्कृत का बहुत महत्त्व है। यद्यपि भारतवर्ष में क्षेत्रीय विषमताएँ एवं विविधताएँ अनंत हैं, तो भी जिन तत्त्वों का इस देश को एक सूत्र में बाँधे रखने में सर्वाधिक योगदान है, उनमें संस्कृत भाषा तथा इसका साहित्य प्रमुख है। पुराणों में भारत के समस्त भूगोल को इस रूप में चित्रित किया गया है कि उसे पढ़कर प्रत्येक भारतीय के मन में अपने देश के प्रति अगाध आस्था एवं श्रद्धा

स्वतः ही उत्पन्न हो जाती है। संस्कृत साहित्य की मूल चेतना समूचे भारतवर्ष को एक राष्ट्र के रूप में देखने की रही है। इतना ही नहीं, **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** (सारी पृथ्वी ही हमारा परिवार है) अथवा **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** (हम सारे विश्व को श्रेष्ठ बनाएँ) जैसी मर्मस्पर्शी उक्तियाँ मानव मात्र के प्रति आत्मीयता के भाव व्यक्त करती हैं।

वेद सारे विश्व का प्राचीनतम वाङ्मय माना जाता है। भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेदों का स्थान नितांत महत्त्वपूर्ण है। इन्हीं की दृढ़ आधार-शिला पर भारतीय धर्म एवं संस्कृति का भव्य प्रासाद प्रतिष्ठित है। भारतीयों के आचार-विचार, रहन-सहन, धर्म-कर्म आदि के रहस्यों को भलीभाँति जानने के लिए वेदों का ज्ञान परमावश्यक है। भारतीय समाज में वेद की प्रतिष्ठा सर्वाधिक है। भारतीय परंपरा में पवित्र ज्ञानराशि वेद को अपौरुषेय (मनुष्य द्वारा अरचित) तथा शाश्वत माना गया है। *बृहदारण्यक उपनिषद्* में वेदों को परमेश्वर का निःश्वास कहा गया है। भारतीयों का यह अगाध विश्वास है कि सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही वेदों का भी चिरंतन ज्ञान ऋषियों-महर्षियों को स्वतः स्फुरित होता गया। किंतु भारतीय परंपरा के विपरीत पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों का रचनाकाल निश्चित करने के अथक प्रयास किए हैं। प्रो. मैक्समूलर ने वेदमंत्रों की रचना 1200 वर्ष ई.पू., प्रो. विण्टरनिट्स ने 2000 वर्ष ई. पू. तथा प्रो. जैकोबी ने कृत्तिका नक्षत्रों की वैदिक स्थिति के आधार पर वेदमंत्रों की रचना 4500 वर्ष ई. पू. निश्चित की है। लोकमान्य तिलक के विवेचन के अनुसार यह काल और भी पूर्ववर्ती होना चाहिए। ऋग्वेद का गंभीर अध्ययन करने के बाद उन्होंने मृगशिरा नक्षत्र में वसंत संपात होने के अनेक संकेत एकत्रित किए। उन्हीं के आधार पर इन्होंने वेदमंत्रों की सर्वप्रथम रचना का काल 6000-4000 वर्ष विक्रम संवत् पूर्व माना।

भारतीय परंपरा के अनुसार समग्र वैदिक ज्ञानराशि पहले विभाजित नहीं थी। अतः लोकोपकार की दृष्टि से द्वापर युग के अंत में महर्षि

वेदव्यास ने इसका त्रिधा विभाजन किया : *ऋग्वेद, यजुर्वेद* और *सामवेद*। ऋग्वेद में स्तुतिपरक मंत्रों का संकलन किया गया। ऋक् का अर्थ होता है – स्तुति। इसी के आधार पर इस वेद का नाम ऋग्वेद रखा गया 'ऋचां वेदः ऋग्वेदः।' यज्ञ में उपयोगी मंत्रों के संकलन को यजुर्वेद कहा गया। यजुष् का अर्थ है- यजन (यज्ञ) में प्रयुक्त होने वाले मंत्र। सामन् का अर्थ, देवताओं को प्रसन्न करने वाले गेय मंत्र हैं। अतः ऐसे साममंत्रों के संकलन को सामवेद कहा गया। कालांतर में ऋक्, यजुष् और सामन् के माध्यम से तीनों रूपों में व्यवस्थित ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद को *'त्रयी'* की संज्ञा से अभिहित किया गया। किंचित् काल पश्चात् महर्षि अथर्वा ने अनेकविध मंत्रों का एक पृथक् संकलन तैयार किया, जो अथर्ववेद के नाम से प्रख्यात हो गया। इसमें ब्रह्म, परमात्मा, राजा, राज्यशासन, संग्राम, नाना देवता, यज्ञ, राष्ट्रीय चेतना, चरित्र निर्माण, औषधोपचार, आधि-व्याधि निवारण आदि अनेक प्रकार के सांसारिक विषय समाविष्ट हैं।

संस्कृत काव्य की परंपरा

काव्य के बीज वैदिक सूक्तों में भी दृष्टिगोचर होते हैं। ऋग्वेद में इंद्र, अग्नि, वरुण, मित्र, रुद्र, सवितृ, सोम, विष्णु, उषा आदि देवों की भावानुप्राणित स्तुतियाँ उपलब्ध होती हैं। ये सांगोपांग संस्कृत कविता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। ऋग्वेद की यह कविता ही विश्व की प्रथम कविता है। इस कविता में माधुर्य का अनुपम परिपाक, प्राकृतिक सुषमा के अद्भुत चित्र तथा जनजीवन की करुण एवं रसपूर्ण संवेदनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। सूर्या तथा सोम के विवाह प्रसंग (ऋ. 10-34) में प्रेम एवं सौंदर्य की तथा अक्षसूक्त में एक जुआरी के मन की गहरी व्यथा की अभिव्यक्ति किस सहृदय के मन को नहीं छूती। इसी दृष्टि से उषा-सूक्त तथा इंद्र-इंद्राणी, यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी आदि संवाद-सूक्त तथा मण्डूक-सूक्त उदात्त काव्योचित अभिव्यक्तियों के लिए उल्लेखनीय हैं।

वैदिक कविता ने समग्र विश्व को स्नेह, साहचर्य, सहयोग, ममता एवं विश्वबंधुत्व की शिक्षा दी है। समान यात्रा, समान वाणी और समान चिंतन का अनुपम आदर्श हमें ऋग्वेद की कविता में दृष्टिगोचर होता है :

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते।। ऋ.x.191. 2

हमारे विचार समान हों, हमारी सहमति समान हो, हमारी मनोवृत्ति समान हो, समत्व का यह महामंत्र आज के युग में नितांत सार्थक है।

इसी प्रकार संपूर्ण पृथ्वी-सूक्त (अथर्व.XII.1) राष्ट्रीय अस्मिता का चूड़ांत निदर्शन है। वैदिक कवि तो पृथ्वी को ममतामयी माँ के ही रूप में देखने का अभिलाषी है। **"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"** का उद्घोष अथर्ववेद का महामंत्र है।

विषयवस्तु की दृष्टि से वेद का चार भागों में विभाजन किया जाता है : *मंत्र, ब्राह्मण, आरण्यक* एवं *उपनिषद्*। यहाँ मंत्र का अर्थ मनन योग्य वाक्य है, जो ऋग्वेद आदि संहिताओं के रूप में उपलब्ध है। इन मंत्रों की व्याख्या करने वाले भाग ब्राह्मण हैं। ये ग्रंथ यज्ञीय कर्मकांड से जुड़े हैं। आरण्यक-ग्रंथों में वानप्रस्थोचित नियम तथा आचारसंहिता का उल्लेख है। उपनिषदों का प्रतिपाद्य विषय है पारलौकिक गूढ़ रहस्यों का व्याख्यान। इस तरह वेद असीम हैं। उन्हें सही ढंग से समझने, इनके उच्चारण तथा उचित क्रियाकलापों में प्रयुक्त करने के लिए छः वेदाँगों का विकास किया गया। ये हैं : *शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद* और *ज्यौतिष*। ये सभी अपने-आप में स्वतंत्र शास्त्रों के रूप में विकसित हुए।

कर्मकांड एवं वानप्रस्थोचित नियमों से संबद्ध होने के कारण ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रंथों में कविता का प्रस्फुटन न के बराबर है। किंतु उपनिषद् वाङ्मय में काव्यधारा का एक प्रौढ़ एवं अलंकृत रूप दृष्टिगोचर होता है। उपमा, उत्प्रेक्षा तथा रूपकादि अलंकारों से ओत-प्रोत यह कविता गूढ़तम विषयों को सरलतम शब्दों में प्रतिपादित करती है। जिस प्रकार बहती हुई नदियाँ अपना नाम एवं रूप छोड़कर समुद्र-रूप हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार साधक भी परब्रह्म में विलीन हो जाता है :

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।
(मु.उ. III 2.8)

वैदिक कविता, निस्सन्देह आर्ष-प्रज्ञा का लीलाविलास है। यह कविता के लिए नहीं लिखी गई है। इसमें वैदिक ऋषि गूढ़ विषयों का चिंतन करते-करते अत्यंत सहृदय हो उठता है। प्रकृति सौंदर्य के नयनाभिराम दृश्य तथा लोकजीवन के मर्मस्पर्शी यथार्थ स्वतः ही वर्णनों में गुम्फित हो जाते हैं। किंतु कालांतर में वेद की यही नैसर्गिक कविता एक परिनिष्ठित ढाँचे में ढल गई, जिसका निदर्शन हमें रामायण, महाभारत और पुराणों में पर्याप्त मिलता है।

रामायण की रचना का एकमात्र उद्देश्य आदर्श महामानव के चरित्र की स्थापना था। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र में भक्तवत्सल, शरणागतरक्षक, दुष्टविनाशक जैसे उदात्त गुण चरितार्थ होते हैं। उस महान् चरित्र का ही यह प्रभाव था कि रामकथा देश, काल एवं व्यक्ति की सीमाओं का अतिक्रमण करती हुई प्राचीन चम्पा, कम्बुज (कम्बोडिया), कटाह द्वीप (मलेशिया) तथा सुवर्णद्वीप (जावा, सुमात्रा, बाली) में भी प्रसिद्ध हो गई।

रामायण में यद्यपि संस्कृत कविता का भावपक्ष, अधिक प्रबल है, तथापि उसमें लोकजीवन के विविध पक्ष भी उपेक्षित नहीं हैं। परवर्ती संस्कृत कवियों ने रामायण को आदिकाव्य तथा वाल्मीकि को आदिकवि के नाम से अभिहित किया है। रामायण की कविता निस्सन्देह परवर्ती संस्कृत कविता के समृद्धतम रूप की प्रथम आधारशिला है।

महाभारत महर्षि व्यास की कालजयी कृति है। एक लाख श्लोकों का यह ग्रंथ विविध सूचनाओं का विश्वकोष एवं ज्ञान-विज्ञान का भंडारग्रंथ है। मूलतः तो यह ग्रंथ कौरवों तथा पांडवों के महायुद्ध एवं विजय की कथा है, किंतु इतिहास के इस वर्णन में भी काव्यात्मकता का अद्भुत निर्वाह महर्षि वेदव्यास ने किया है। यह सत्य है कि

रामायण और महाभारत भाषा, भाव, शैली तथा कथानक की दृष्टि से समग्र संस्कृत साहित्य के उपजीव्य ग्रंथ बन गए हैं।

पुराणों का रचयिता भी महर्षि व्यास को ही माना जाता है। ये पुराण संख्या में 18 हैं। मत्स्य, मार्कण्डेय, भागवत, वामन, वराह, विष्णु, वायु, अग्नि, गरुड, स्कन्द आदि इनमें प्रमुख माने जाते हैं। इन पुराणों का प्रतिपाद्य विषय तो सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर आदि का विस्तृत विवेचन है किंतु कविता का अजस्र प्रवाह भी इनमें यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है। भागवतपुराण का वेणुगीत, गोपीगीत तथा भ्रमरगीत समूची संस्कृत कविता का शृंगार है। पुराण की कविता किसी भी दृष्टि से भास एवं कालिदास की रसमयी कविता से कम नहीं है। कृष्ण के विरह में व्याकुल उनकी राजरानियों का कुररी पक्षी को दिया गया निम्न उपालम्भ अन्योक्तिपरंपरा का अनुपम उहारण है :

कुररि विलपसि त्वं वीतनिद्रा न शेषे स्वपिति जगति रात्र्यामीश्वरो गुप्तबोधः।
वयमिव सखि किंचिद् गाढनिर्भिन्नचेता नलिननयनहासोदारलीलेक्षितेन।।

(भागवत 10.90.15)

वैदिक वाङ्मय, रामायण, महाभारत एवं पुराण की ऊँची-नीची उपत्यकाओं में बहती सरस संस्कृत काव्यधारा अब भागीरथी की तरह समतलभूमि में प्रवेश कर अपने तटों पर पाणिनि, पतंजलि, कालिदास, भारवि, माघ एवं श्रीहर्ष जैसे पावन तीर्थों का निर्माण करने में लग जाती है। महर्षि पाणिनि (ई.पू. 5वीं शती) ने चिरकाल से प्रयोग में आ रही भाषा को परिमार्जित कर उसे एक स्थिर रूप प्रदान किया, जिसे संस्कृत कहा जाने लगा। लोक के लिए अधिक उपयोगी, सरल एवं बोधगम्य होने के कारण ही इस भाषा को कालांतर में लौकिक संस्कृत कहा जाने लगा।

महर्षि पाणिनि-प्रणीत *'जाम्बवतीविजय'* संभवतः लौकिक संस्कृत भाषा का प्रथम महाकाव्य है, जो कि अब उपलब्ध नहीं है। तत्पश्चात् वररुचि-प्रणीत महाकाव्य *'स्वर्गारोहण'* का उल्लेख भी मिलता है। वररुचि

का काल ई.पू.चतुर्थ शती माना जाता है। पतंजलि (ई.पू. 150 वर्ष) के महाभाष्य से भी संस्कृत कविता के विकास के बहुमूल्य साक्ष्य मिलते हैं। *वासवदत्ता, सुमनोत्तरा* तथा *भैमरथी* नामक आख्यायिकाओं का उल्लेख हमें महाभाष्य में ही मिलता है।

महाभाष्यकार पतंजलि के अनंतर संस्कृत कविता का श्रेष्ठ स्वरूप महाकवि कालिदास की कृतियों में देखने को मिलता है। वेदों से प्रारंभ काव्यधारा पुराणों के कलेवर तक जहाँ मुक्त वातावरण में प्रवाहित हुई, वहीं उसके अनंतर उसका विकास काव्य-लक्षणों की सीमाओं के बीच हुआ। ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में आविर्भूत आचार्य भरत का *नाट्यशास्त्र* काव्यशास्त्रीय लक्षणों का प्रथम मानक ग्रंथ है, जिसमें रस, गुण, अलंकार, छंद एवं रंगमंच का सूक्ष्म विवेचन मिलता है। शैली के आधार पर कविता का गद्य, पद्य तथा चम्पू के रूप में त्रिधा विभाजन भी हमें नाट्यशास्त्र के 18वें अध्याय में मिलता है। अवांतर काल में भामह, दण्डी तथा रुद्रट आदि आचार्यों ने जैसे-जैसे काव्यशास्त्रीय तथ्यों को परिमाार्जित किया, वैसे-वैसे काव्यकृतियों के स्वरूप भी परिवर्तित होते गए।

ई.पू. प्रथम शती के उज्जयिनी-नरेश विक्रमादित्य के राजकवि महाकवि कालिदास ने दो महाकाव्य : *रघुवंश* एवं *कुमारसंभव,* दो खंडकाव्य : *मेघदूत* एवं *ऋतुसंहार* तथा तीन नाटक : *अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय* तथा *मालविकाग्निमित्र* की रचना की। कालिदास के युग में हुए कवियों में अश्वघोष, शूद्रक, मातृचेट, आर्यशूर, कुमारदास तथा प्रवरसेन आदि की गणना होती है। इसे संस्कृत कविता का उत्कर्ष काल माना जाता है। इस युग की कविता में भाव तथा भाषा का सुंदर समन्वय मिलता है तथा व्यजंनावृत्ति की प्रधानता है। साथ ही, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अप्रस्तुतप्रशंसा, समासोक्ति जैसे कोमल एवं सहज अर्थालंकारों द्वारा कविताकामिनी का सर्वत्र अलंकरण मिलता है। कालिदास की कविता इस विधा का सर्वोत्तम निदर्शन है। निम्नलिखित पद्य में भाव-सौंदर्य एवं उपमा का मंजुल समन्वय द्रष्टव्य है :

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

(रघुवंश 6.67)

महाकवि भारवि (6वीं शती ई.) के साथ कालिदासोत्तर संस्कृत कविता का उदय हुआ। इस युग के प्रमुख कवि हैं : भारवि, माघ, भट्टि, रत्नाकर, श्रीहर्ष आदि। इस युग की कविता में कलापक्ष की प्रधानता दिखाई देती है। शनैः शनैः संस्कृत कविता उत्तरोत्तर अलंकारों के प्रयोग से बोझिल होती गई। शब्दालंकारों तथा चित्रबंधों से उसकी दुरूहता, जटिलता एवं असम्प्रेषणीयता उत्तरोत्तर बढ़ती गई।

प्रायः 17वीं शती ई. में पंडितराज जगन्नाथ के साथ संस्कृत कविता के कलात्मक उत्कर्ष का अध्याय पूर्ण समझ लिया जाता है। इसके बाद संस्कृत कविता दो-तीन सौ वर्षों तक सिसकती और खिसकती रही। परंतु 19वीं शती के राष्ट्रीय पुनर्जागरण के साथ उसमें भी नए जीवन और नई चेतना का संचार आरंभ हो गया। इस युग के संस्कृत कवियों ने प्राचीन परंपराओं का परित्याग न करते हुए भी राष्ट्र के नूतन परिवेश में काव्य साधना की। पं. अम्बिकादत्त व्यास, म. म. गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी, मथुरानाथ शास्त्री आदि का नाम इस युग के कवियों में उल्लेखनीय है। यह स्वातंत्र्योत्तर संस्कृत कविता का उदयकाल था।

एक ओर जहाँ संस्कृत कविता मानवीय संवेदना से जुड़कर विकसित हो रही थी, वहीं दूसरी ओर विज्ञान एवं शास्त्र-चिंतन से जुड़ी दूसरी काव्यधारा भी समानांतर स्तर पर प्रवाहित हो रही थी। आयुर्वेद, रसायन, ज्यौतिष जैसे वैज्ञानिक विषयों के साथ-साथ काव्यशास्त्र, दर्शनशास्त्र, गणित, तन्त्र, संगीत, काम आदि शास्त्रों का पल्लवन भी अबाधगति से हो रहा था। ये सभी शास्त्रीय ग्रंथ प्रायः पद्यबद्ध हैं। इनमें आयुर्वेद के चरकसंहिता एवं सुश्रुतसंहिता, रसायनविज्ञान के रसरत्नाकर (नागार्जुन), रसहृदयतंत्र (भगवत्पाद), रसरत्नसमुच्चय (वाग्भट), रसेन्द्रचूड़ामणि (सोमदेव), ज्योतिषशास्त्र के आर्यभटीय (आर्यभट),

पंचसिद्धान्तिका, बृहज्जातक, बृहत्संहिता (वराहमिहिर - 505 ई.) तथा भास्कराचार्य, नीलकण्ठ, कमलाकर आदि विद्वान् उल्लेखनीय हैं।

काव्यशास्त्र के ग्रंथों में काव्यालंकार (भामह-7वीं शती ई.), काव्यादर्श (दण्डी 7वीं शती ई.), काव्यालंकार (रुद्रट), वक्रोक्तिजीवित, काव्यप्रकाश (मम्मट), साहित्यदर्पण (विश्वनाथ) तथा रसगङ्गाधर (पण्डितराज जगन्नाथ) उल्लेखनीय हैं। आचार्य भरत का नाट्यशास्त्र, धनंजय का दशरूपक, रामचन्द्र गुणचन्द्र का नाट्यदर्पण आदि नाट्यशास्त्रीय ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। आचार्य पिङ्गल का छंदःशास्त्र, क्षेमेन्द्र का सुवृत्ततिलक, नकुल का अश्वशास्त्र, वात्स्यायन का कामशास्त्र, कौटिल्य का अर्थशास्त्र तथा मनु, याज्ञवल्क्य आदि के स्मृतिग्रंथ भी अपनी-अपनी विधाओं के मूल स्रोत हैं। वस्तुतः विज्ञान एवं शास्त्र पर आधारित संस्कृत वाङ्मय का भंडार बहुत विशाल एवं विविध है। यहाँ केवल परिचयात्मक ज्ञान के लिए ही किंचित् सामग्री दी गई है।

संस्कृत गद्यकाव्य की परंपरा

संस्कृत गद्य की परंपरा वैदिक काल से मानी जा सकती है। तैत्तिरीय संहिता में गद्य का प्रयोग बहुल मात्रा में मिलता है। वैदिक साहित्य में ब्राह्मणों, आरण्यकों और उपनिषदों में संस्कृत गद्य का प्रभूत विकसित रूप पाया जाता है। शतपथ और ऐतरेय ब्राह्मण के कुछ गद्यमय आख्यान तो उत्तरकालीन कवियों के लिए उपजीव्य बन गए हैं। उपनिषदों में प्रयुक्त संस्कृत गद्य का निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है :

'अथ ह जनको वैदेहो याज्ञवल्क्यमुपसमेत्योवाच भगवन् संन्यास-मनुब्रूहीति। स होवाच 'याज्ञवल्क्यो ब्रह्मचर्यं समाप्य गृहीभवेत्, गृहीभूत्वा वनीभवेत्, वनीभूत्वा प्रव्रजेत्।'

वैदिक साहित्य के बाद सूत्र-साहित्य में, विशेषकर धर्मसूत्रों में संस्कृत-गद्य का विकसित रूप मिलता है। पाणिनि की अष्टाध्यायी पर रचित पतंजलि का महाभाष्य गद्य में लिखा गया है। महाभारत में भी

कहीं-कहीं संस्कृत-गद्य के उत्कृष्ट उदाहरण देखने को मिलते हैं। दूसरी शती ई. में तो गद्य के विकास के प्रौढ़ प्रमाण मिल जाते हैं। इनमें रुद्रदामन् का गिरनार शिलालेख अलंकृत गद्यकाव्यशैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस काल तक गद्य काव्यधारा निश्चित रूप में अपना स्वतंत्र अस्तित्व बना चुकी थी। उसके बाद आर्यशूर की जातकमाला में मनोहारी गद्य का स्वरूप मिल जाता है। हरिषेण द्वारा रचित समुद्रगुप्त-प्रशस्ति में भी संस्कृत गद्य का सुंदर एवं प्रौढ़ रूप दिखाई देता है। इस तरह पाँचवी शती तक आते-आते संस्कृत गद्य अपनी सभी विधाओं में प्रतिष्ठित हो चुका था। गुणाढ्य की बृहत्कथा से प्रभावित होकर *वेताल - पंचविंशतिका* जैसी कथाएँ लौकिक संस्कृत साहित्य में प्रतिष्ठा पा चुकी थीं। दिव्यावदान, अवदानशतक आदि जैसी सरस कथाएँ संस्कृत-गद्य को खूब पल्लवित करने लगीं। संस्कृत नाटकों में भी संवाद के रूप में गद्यकाव्य अपने वैभव को प्राप्त कर चुका था। छठी शती तक आते-आते गुण, अलंकार और रस की दृष्टि से गद्यकाव्य पर्याप्त समृद्ध हो चुका था। उसी काल में बाण की वाणी ने अपनी रचनाओं हर्षचरित और कादम्बरी के माध्यम से गद्यकाव्य को उन्नति की पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। बाण के गद्य में वर्ण-विन्यास, शब्द-प्रयोग, अर्थ-संकल्पना, भाव-सामंजस्य एवं रसमाधुर्य अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाते हैं। उसके बाद के गद्यकारों में सुबन्धु, दण्डी, धनपाल, वामनभट्ट, अम्बिकादत्त व्यास आदि का नाम उल्लेखनीय है।

संस्कृत गद्यकाव्य का रूप, आधार, विषय आदि की दृष्टि से कई विधाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं : कथा, आख्यायिका, आख्यान, चम्पू, प्रशस्ति, अभिलेख, पत्र एवं निबंध। इनमें कथा प्राचीनतम विधा है, जो कि कल्पनाप्रसूत कहानी पर आधारित होती है; जैसे– बाण की कादम्बरी। ऐतिहासिक विषयवस्तु को आधार बनाकर लिखे गए गद्यकाव्य को आख्यायिका कहते हैं; यथा – बाण का *हर्षचरित।* आख्यान का आकार प्रायः छोटा होता है जिसमें ऐतिहासिक तथा काल्पनिक दोनों प्रकार के विषय होते हैं। संस्कृत के आख्यान-साहित्य में *पंचतन्त्र, हितोपदेश, शुकसप्तति* आदि प्रसिद्ध हैं।

गद्य-पद्य मिश्रित काव्य को चम्पू कहा गया है। संस्कृत-साहित्य में त्रिविक्रमभट्ट का नलचम्पू, भोज का चम्पूरामायण, सोमदेवसूरि का *यशस्तिलकचम्पू* आदि विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। संस्कृत के कवियों ने अपने आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा में प्रायः गद्यकाव्यों की रचना की है, जिन्हें प्रशस्तिकाव्य के नाम से जाना जाता है। प्राचीन काल में शिलाओं, ताम्रपत्रों तथा स्तूपों पर प्रायः शासनादेश लिखे जाते थे। इनका गद्य सामान्य गद्य से भिन्न होता था। अतः इन्हें अभिलेख गद्य का एक पृथक् भेद मान लिया गया। पत्र-लेखन भी प्राचीन काल से ही होता रहा है। संस्कृत गद्य-साहित्य की अपेक्षाकृत नवीन विधा निबंध लेखन है। संस्कृत गद्यमय निबंधों में हृषीकेश शास्त्री की *प्रबंध मंजरी*, रामावतार शर्मा का *प्रकीर्ण निबंध* आदि उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत के प्रमुख गद्यकारों में आर्यशूर का नाम सर्वप्रथम लिया जा सकता है। उनका स्थितिकाल 300 ई. के आसपास माना जाता है। उनकी रचना जातकमाला में दीर्घ एवं लघु दोनों प्रकार के समासों का समन्वय प्राप्त होता है। छठी शती में हुए दण्डी का दशकुमारचरित संस्कृत गद्य का उत्कृष्ट निदर्शन है। इसकी भाषा नैसर्गिक, प्रवाहपूर्ण एवं मुहावरेदार है। दण्डी का पदलालित्य प्रसिद्ध है। सातवीं शती के पूर्वार्ध में सुबन्धु ने गौड़ी शैली में वासवदत्ता नामक गद्यग्रंथ की रचना की, जिसमें कन्दर्पकेतु और वासवदत्ता की प्रणयकथा वर्णित है। सुबन्धु ने अपनी रचना में लंबे-लंबे समासों, अनुप्रास तथा श्लेष अलंकार का विशेष रूप से प्रयोग किया है।

संस्कृत गद्यसाहित्य में सर्वाधिक प्रसिद्ध गद्यकार बाण ही हैं, उनकी *हर्षचरित* एवं *कादम्बरी* नाम की दो रचनाएँ गद्यकाव्य का अलंकार मानी गई हैं। रस, अलंकार, गुण, रीति आदि के समुचित प्रयोग के कारण कादम्बरी संस्कृत की सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जाती है। त्रिविक्रमभट्ट की *नलचम्पू* सरस एवं प्रसादपूर्ण रचना है। इसमें सभङ्ग श्लेष एवं अभङ्ग श्लेष की प्रधानता है। धनपाल की *तिलकमंजरी*, बाण की शैली में लिखी गई है। इसकी भाषा पर्याप्त प्रांजल एवं

दुरूहता से रहित है। 11वीं शती के सोड्ढल की *उदयसुन्दरीकथा* गद्यबाहुल्य के कारण गद्यकाव्य में गिनी जाती है। इसमें पदसौष्ठव तथा आरोह स्पष्ट प्रतीत होते हैं। 19वीं शती के पूर्वार्द्ध में हुए अम्बिकादत्त के गद्यकाव्य *शिवराजविजय* में छत्रपति शिवजी का जीवन-वृत्त चित्रित है। इसमें यत्र-तत्र बाण की शैली का अनुकरण है। संपूर्ण गद्यकाव्य राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है।

संस्कृत भाषा में गद्य-रचना कम हुई है, फिर भी विभिन्न कालों में कवियों ने गद्यकाव्य की रचना में अपना कौशल प्रदर्शित किया है। आधुनिक काल के गद्यकारों में पण्डिता क्षमाराव (1890-1954 ई.) का नाम अग्रणी है। उन्होंने *कथामुक्तावली, विचित्रपरिषद्यात्रा* इत्यादि कई गद्य-काव्य लिखे हैं। इनके अतिरिक्त मथुरानाथ शास्त्री, हृषीकेश भट्टाचार्य, नवलकिशोर काङ्कर आदि के नाम भी आधुनिक गद्यसाहित्य में उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत नाट्यसाहित्य की परंपरा

नाटक संस्कृत काव्य का सुन्दरतम रूप माना गया है - **'काव्येषु नाटकं रम्यम्।'** दर्शकों द्वारा देखे जाने के कारण इसे दृश्यकाव्य भी कहा जाता है। नाट्य की महिमा बतलाते हुए भरतमुनि ने लिखा है कि संसार का ऐसा कोई ज्ञान, शिल्प, विद्या, कला, योग और कर्म नहीं है, जो इसमें न आता हो। महाकवि कालिदास ने भी कहा है कि नाटक भिन्न-भिन्न रुचि के लोगों के लिए मनोरंजन का एक सामान्य साधन है। इसीलिए नाटक को संस्कृत काव्य की चरमपरिणति माना जाता है - **'नाटकान्तं कवित्वम्।'** सभी प्रकार के काव्यरूपों में नाटक अपेक्षाकृत अधिक जनप्रिय होते हैं, क्योंकि इनमें मनोरंजन, रस-भावाभिव्यक्ति और विषय की विविधता अधिक पाई जाती है।

नाटक की उत्पत्ति के बारे में विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत मिलते हैं। भारतीय परंपरा नाटक को पंचम वेद मानती है। महामुनि भरत के अनुसार ब्रह्मा ने चारों वेदों का ध्यान करके ऋग्वेद से संवाद, सामवेद

से गान, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस के तत्त्वों को लेकर 'नाट्यवेद' नामक पंचम वेद की रचना की। कई विद्वानों ने ऋग्वेद के संवाद-सूक्तों में संस्कृत नाटकों का प्रारंभिक रूप देखा है। इन सूक्तों में *इन्द्र-मरुत्, अगस्त्य - लोपामुद्रा, विश्वामित्र - नदी, वसिष्ठ - सुदास, यम - यमी, इन्द्र - इंद्राणी, पुरूरवा - उर्वशी, सरमा - पणि* आदि के संवाद बहुत प्रसिद्ध हैं। ये संवादात्मक सूक्त नाटकीय माने गए हैं। पाश्चात्य विद्वानों ने नाटक की उत्पत्ति के संबंध में पुत्तलिका-नृत्य, स्वाँग, छायानाटक, वीरपूजा आदि के सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं।

नाटक के विकास के लिए अपेक्षित तत्त्व गीत, वाद्य, अभिनय, संवाद आदि की सत्ता वैदिक काल में भी थी। रामायण और महाभारत में नट, नर्तक, नाटक आदि के प्रयोग से सिद्ध होता है कि उस युग में भी नाटकों का प्रचलन था। ईसापूर्व दूसरी शती में पतंजलि ने अपने महाभाष्य में *कंसवध* और *बलिबन्ध* नामक नाटकों के खेले जाने का उल्लेख किया है। ईसापूर्व पाँचवीं शती में पाणिनि ने अपनी *अष्टाध्यायी* में दो नटसूत्रों का उल्लेख किया है। ऐसा भी कहा जाता है कि पाणिनि ने *जाम्बवतीविजय* नामक नाटक की रचना भी की थी। अशोक के शिलालेखों में भी, नट और समाज का उल्लेख मिलता है। इससे सिद्ध होता है कि भारत में नाट्य-परंपरा अत्यंत प्राचीन काल से है।

संस्कृत नाट्यसाहित्य में सबसे प्राचीन रचनाएँ महाकवि भास की मिलती हैं। इनका समय चौथी-पांचवीं शती ई.पू. के लगभग माना जाता है। इन्होंने तेरह नाटकों की रचना की, जिनमें *स्वप्नवासवदत्त, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, प्रतिमानाटक, पंचरात्र, दूतवाक्य, कर्णभार* आदि प्रसिद्ध हैं। इनके बाद शूद्रक का *मृच्छकटिक* उल्लेखनीय है।

महाकवि कालिदास का नाम संस्कृत नाट्यसाहित्य में सर्वोपरि है। इन्हें कविकुलगुरु भी कहा जाता है। इनका *अभिज्ञानशाकुन्तल* अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य भाषाओं में अनूदित हो चुका है। इसमें आदर्श भारतीय जीवन का वर्णन है। *मालविकाग्निमित्र* और *विक्रमोर्वशीय* कालिदास के दो अन्य प्रसिद्ध नाटक हैं। कालिदास की शैली सरल, सरस, मधुर, प्रसाद तथा लालित्य गुणों से संपन्न है।

कालिदास के बाद अश्वघोष, विशाखदत्त, दिङ्नाग, भट्टनारायण, भवभूति, हर्ष आदि का नाम संस्कृत नाट्यसाहित्य में उल्लेखनीय है। इनमें भवभूति का नाम सर्वाधिक प्रसिद्ध है। उन्होंने तीन नाटकों की रचना की है : *मालतीमाधव, महावीरचरित* और *उत्तररामचरित*। इनमें उत्तररामचरित सर्वश्रेष्ठ है। यह वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा पर आधारित है। इसमें करुण रस की अत्यंत सुंदर एवं मार्मिक निष्पत्ति देखने योग्य है। भवभूति में यद्यपि कालिदास की सी सरलता और सहजता नहीं है, फिर भी नाट्यसाहित्य में उन्हें कालिदास के समान ही सम्मान मिलता है। आदर्श वैवाहिक जीवन के चित्रण में भवभूति पारंगत हैं। राम और सीता के कोमल एवं पवित्र प्रेम का चित्रण भी 'उत्तररामचरित की विशिष्टता है।

संस्कृत नाटकों की प्रमुख विशेषता उनका सुखांत होना है। संपूर्ण नाटक में यद्यपि सुख और दुःख का सम्मिश्रण दृष्टिगोचर होता है, तो भी उसका अंत सुखांत ही होता है। सुख के उपपादन के लिए ही नाटक में दुःख का निष्पादन होता है। इसके पीछे भारतीय चिंतन ही मुख्यतः प्रधान है। प्राचीन भारत के निवासी आशावादी थे। उनके अनुसार जीवन में दुःख-क्लेश की परिणति सदैव सुख और परमानंद में होती है।

संस्कृत नाटकों में संवाद के लिए प्रायः गद्य का ही प्रयोग होता है, परंतु रोचकता, प्रकृतिवर्णन, नीतिशिक्षा आदि के लिए पद्य के प्रयोग को महत्त्व दिया जाता है। संस्कृत के साथ-साथ प्राकृत भाषाओं का प्रयोग भी संस्कृत नाटकों में मिलता है। सभी प्रकार के पात्र संस्कृत समझते तो हैं, किंतु अपने-अपने सामाजिक स्तर के अनुरूप संस्कृत या प्राकृत बोलते हैं। नायक के मित्र के रूप में विदूषक की कल्पना संस्कृत नाटकों की एक उल्लेखनीय विशेषता है। इन नाटकों में अभिनय संबंधी संकेत, यथा – प्रकाशम्, स्वगतम्, जनांतिकम्, सरोषम्, विहस्य इत्यादि सूक्ष्मता के साथ दिए जाते हैं। मनोरंजन के साथ-साथ नैतिकता और उच्च आदर्शों का जनमानस में संचार करना भी संस्कृत-नाटकों का एक लक्ष्य है। लौकिक और अलौकिक सभी प्रकार के पात्र इनमें होते हैं और प्रकृति-वर्णन संस्कृत-नाटकों की एक बहुत बड़ी विशेषता है।

प्रस्तुत संकलन

संस्कृत के अखिल भारतीय महत्त्व को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में वरिष्ठ माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों के लिए प्रस्तुत संकलन का संपादन किया गया है। इससे पूर्व एकादश, द्वादश वर्ग की कक्षाओं के लिए गद्यपद्य एवं नाटक की स्वतन्त्र पुस्तकों का प्रावधान था। विगत वर्षों में परिषद् द्वारा प्रकाशित *विद्यालयीय शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूप रेखा, 2000 ई.* के आधार पर विद्यालयों के लिए विकसित, नए पाठ्यक्रम के अनुरूप पाठ्यपुस्तकों के संशोधन परिवर्तन के क्रम में यह अनुभव किया गया कि संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के पृथक्-पृथक् संकलन के स्थान पर एक ऐसा संकलन तैयार किया जाय, जो द्वादशवर्गीय कक्षा के छात्रों की वर्तमान अपेक्षाओं को पूर्ण करता हो तथा संस्कृत साहित्य की प्रमुख विधाओं-गद्य, पद्य एवं नाटक का प्रतिनिधित्व करता हो। तदनुसार **संस्कृत-संजीवनी द्वितीयो भागः** नामक यह नवीन संकलन तैयार किया गया। प्रस्तुत संकलन में दस पाठ हैं। इनमें प्रथम पाठ **उपनिषदाममृतम्** में ईशावास्योपनिषद्, मुण्डक, कठ, तैत्तिरीय एवं श्वेताश्वतर उपनिषद् से मंत्रों को संकलित किया गया है। विश्वशांति, विश्वबंधुत्व, चरित्र निर्माण और राष्ट्रप्रेम की दृष्टि से ये मंत्र छात्रों के लिए एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करते हैं। द्वितीय पाठ **कर्मयोग** में श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय व तृतीय अध्याय के 9 श्लोक संकलित हैं। इनमें निष्काम कर्म की महत्ता प्रतिपादित है। कर्म करने में ही मनुष्य का अधिकार है कर्मफल में नहीं। अतः फलासक्ति को छोड़कर कर्त्तव्य बुद्धि से कर्म करना चाहिए, कर्म-फल की दृष्टि से इस पाठ का बहुत महत्त्व है। तृतीय पाठ **कण्वोपदेशः** कालिदास के विश्वप्रसिद्ध *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* नाटक के चतुर्थ अंक से संकलित है। इसमें पति-गृह जाती हुई शकुन्तला के लिए महर्षि कण्व ने गृहस्थ धर्म तथा सेवाधर्म का उपदेश दिया है। चतुर्थ पाठ **लक्ष्म्याः प्रभावः** महाकवि बाणभट्ट रचित *कादम्बरी* नामक सुप्रसिद्ध गद्य काव्य के शुकनासोपदेश प्रखण्ड से उद्धृत है। इसमें राजा तारापीड के पुत्र युवराज चन्द्रापीड के लिए महामंत्री शुकनास ने राज्यलक्ष्मी

के प्रभाव से तथा यौवन मद जनित विकार से होने वाले दुष्प्रभाव के निराकरण का उपदेश दिया है। पञ्चम पाठ **नीति-श्लोकाः** में कवि भर्तृहरि रचित *नीतिशतकम्* से 11 श्लोक संकलित हैं। इसमें मैत्री, दान इत्यादि विषयों पर नीतिगत उपदेश दिए गए हैं। इससे छात्रों के चरित्र निर्माण एवं संयम तथा आत्मोन्नयन का संदेश प्राप्त होता है। षष्ठ पाठ **'यथा बीजं तथा फलम्'** विष्णुशर्मा रचित *पञ्चतंत्र* से संकलित है। इसमें "लब्धप्रणाश" नामक चतुर्थतन्त्र की कथा का उल्लेख किया गया है। इस पाठ से यह शिक्षा मिलती है कि जैसा कर्म किया जाता है, उसी के अनुसार फल की प्राप्ति होती है। इसलिए सत्कर्म करने में यह पाठ प्रेरणाप्रद है। सप्तम पाठ **औषधम्** आयुर्वेद शास्त्र के उद्भट विद्वान् वाग्भट रचित *"अष्टाङ्गहृदयम्" ग्रंथ* से संगृहीत है। इनमें विविध रोगों के विविध औषधियों का निदान प्रस्तुत किया गया है। अंत में सदाचार से सभी रोगों पर नियंत्रण करने का उपदेश है, जिससे छात्रों को सदाचार में प्रवृत्त होने की प्रेरणा मिलती है। अष्टम पाठ **लवकौतुकम्** भवभूति रचित *उत्तररामचरितम्* नाटक के चतुर्थ अंक से संकलित है। इसमें लव व कुश के अद्भुत क्षात्र पराक्रम तथा स्वाभिमान का परिचय प्राप्त होता है। नवम पाठ **पाणिनिकथा** सोमदेव रचित *कथासरित्सागर* से उद्धृत है। इसमें प्रारंभ में मंदबुद्धि किंतु परिश्रम एवं अभ्यास के द्वारा विशिष्ट विद्वान् के रूप में पाणिनि ने *व्याकरणशास्त्र* की रचना की है तथा अन्य सभी व्याकरणों में पाणिनि व्याकरण मूर्धन्य है, इसका दिग्दर्शन किया गया है। दशम पाठ **लोकरक्षको रामः** प्रसिद्ध कवयित्री बालाम्बिका द्वारा रचित *सुबोधरामचरितम्* के बाल काण्ड से संकलित है। इसमें विनय, रूप, शील, दया, दाक्षिण्य, शौर्य इत्यादि मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के चरित्र का वर्णन किया गया है। इससे छात्रों को उच्च चरित्र निर्माण के लिए प्रेरणा प्राप्त होती है।

संकलन के सभी पाठों में विभिन्न मानवीय भावों का कुशलता से चित्रण किया गया है। मानवमूल्यों की स्थापना, सहज आंतरिक आकर्षण, परोपकार, बालमनोविज्ञान, रोगनिवारण, चरित्र निर्माण आदि की महत्ता एवं प्रबंध दक्षता की दृष्टि ये पाठ छात्रों के लिए शिक्षाप्रद एवं उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त इस संकलन का उद्देश्य छात्रों को

संस्कृत के प्रसिद्ध तथा महान् साहित्यकारों से परिचित करवाना भी है। इसके साथ-साथ उनकी सौंदर्यानुभूति का विकास करवाना भी इस संकलन का लक्ष्य है।

संस्कृत साहित्य की विशाल परंपरा से इस संकलन में उपनिषद्, पद्य-काव्य, गद्य-काव्य तथा नाटक से प्रतिनिधिभूत अंश संकलित हैं। जिन ग्रंथों से ये पाठ्यांश संकलित हैं, उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया गया है।

उपनिषद् : उपनिषद् का अर्थ रहस्य विद्या है। इसमें ज्ञान का सारतत्त्व वर्णित है। वेदमूलक उपनिषदों की संख्या 14 है। इसमें *ईशावास्योपनिषद्* शुक्लयजुर्वेद से संबद्ध है। प्राचीनतम परम व्यापक परमेश्वर की सत्ता का निर्वचन उक्त उपनिषद् का प्रतिपाद्य विषय है। त्याग एवं जीवन दर्शन की व्यवस्था का भी निरूपण इसमें किया गया है। 14 उपनिषदों में इस उपनिषद् का प्रमुख स्थान है। इसको संक्षेप में ईशोपनिषद् भी कहते हैं। एकत्व की भावना निष्काम कर्म परमात्मा का स्वरूप, त्यागपूर्वक भोग तथा विद्या और अविद्या का महत्त्व इसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। इसमें कुल 18 पद्यात्मक मंत्र संकलित किए गए हैं।

कठोपनिषद् : यह कृष्ण यजुर्वेद से संबंधित है। यह पद्य बहुल भाषा में लिखी गई है। प्रारंभ में गद्य भी हैं। इसमें दो अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में तीन-तीन वल्लियाँ हैं। इसमें योग के महत्त्व और भौतिक पदार्थों की असत्यता प्रतिपादित है। विशेष रूप से नचिकेता उपाख्यान इसमें महत्त्वपूर्ण है। नचिकेता ने यम से तीन वर प्राप्त किए, जिनमें प्रथम में पिता की कोप शांति, द्वितीय में अग्नि विद्या तथा तृतीय में आत्मतत्त्व का ज्ञान है। वस्तुतः यह उपनिषद् सांसारिक जीवन के ऊपर आध्यात्मिक जीवन के उत्कर्ष का प्रतिपादन करता है।

मुण्डकोपनिषद् : यह अथर्ववेद की शौनक शाखा से संबंधित है। इसके नामकरण का यह रहस्य है कि मुण्डित शिरवाले शिष्यों के द्वारा इसका अध्ययन किया जाता है तथा त्याग की पराकाष्ठा का उपदेश इसमें सन्निहित है, जो शिरो व्रत धारण करके विधिवत अध्ययन में प्रवृत्त होता है, उसी का अध्ययनाधिकार इस उपनिषद् में प्राप्त होता

है। यह तीन मुण्डकों में विभक्त है। प्रत्येक मुण्डक में दो-दो खण्ड हैं। प्रथम मुण्डक में परा और अपरा विद्या के दो भेद बताए हैं। इसकी भाषा पद्यबहुल है। ब्रह्मसाक्षात्कार होने पर सारी ग्रन्थियाँ छिन्न हो जाती हैं, यह इसका प्रतिपाद्य है। द्वितीय मुण्डक में ब्रह्म का व्यक्त स्वरूप निर्दिष्ट है। तृतीय मुण्डक में द्वैतवाद (प्रकृति-पुरुष) का उल्लेख किया गया है। अंत में "ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति" यह उत्कृष्ट उपदेश प्राप्त होता है।

तैत्तिरीयोपनिषद् : कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा के "तैत्तिरीयारण्यक" के 10 प्रपाठकों में सप्तम से नवम प्रपाठक तक को तैत्तिरीयोपनिषद् कहते हैं। इसमें तीन वल्लियाँ हैं : शिक्षावल्ली, ब्रह्मानन्दवल्ली, भृगुवल्ली। वल्लियों का अवान्तर विभाजन *अनुवाक्* नाम से किया गया है।

शिक्षावल्ली में प्राचीन शिक्षापद्धति तथा सत्यं वद, धर्मं चर इत्यादि उपदेश दिया गया है। ब्रह्मानन्दवल्ली में ब्रह्म को आनन्दमय, सत्यमय, और ज्ञानमय कहा गया है तथा उसी से आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, वनस्पति, अन्न आदि की उत्पत्ति बतलाई गई है। भृगुवल्ली में भृगु के द्वारा अपने पिता वरुण से ज्ञान प्राप्ति का आख्यान वर्णित है। इसमें ब्रह्मजिज्ञासा विशेष रूप से निरूपित है। इस उपनिषद् का बादरायण के द्वारा ब्रह्मसूत्र में उपयोग किए जाने के कारण इसका विशेष दार्शनिक महत्त्व है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् : यह उपनिषद् कृष्णयजुर्वेद से संबंधित है तथा परवर्ती उपनिषद् के रूप में चर्चित है। इसमें सांख्यदर्शन के मूल सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। कठोपनिषद् के अनेक मंत्र अविकल रूप से इसमें प्राप्त होते हैं। इसमें 6 अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में ब्रह्म की व्यापकता और उसके साक्षात्कार का उपाय, द्वितीय अध्याय में ईश्वर की रुद्र रूप में स्तुति, चतुर्थ अध्याय में ब्रह्म *(ईश्वर)* की माया, पंचम अध्याय में परमात्मा का जीव के रूप में शरीर ग्रहण तथा षष्ठ अध्याय में एकात्मक ब्रह्म का देव के रूप में वर्णन है। संपूर्ण उपनिषद् पद्यात्मक है, जिसका दार्शनिक महत्त्व विद्वानों के द्वारा अंगीकृत है।

श्रीमद्भगवद्गीता : यह ग्रंथ महाभारत के भीष्म पर्व से संगृहीत है। इसमें 18 अध्याय हैं, जिनमें 18 प्रकार के योग का वर्णन किया गया है। समग्र योगों में कर्मयोग का विशिष्ट स्थान है। संसार में प्राणि-मात्र का जन्म कर्म करने के लिए हुआ है। क्षणमात्र भी बिना कर्म किए कोई नहीं रह सकता। यही कर्म निष्काम भावना से किए जाने पर निष्काम कर्मयोग के नाम से जाना जाता है। निष्काम का अर्थ है सभी प्रकार की कामनाओं का अभाव। इसी को शब्दांतर से अनासक्ति कहा जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय में भगवान् कृष्ण ने निष्काम कर्मयोग का सांगोपांग उपदेश अर्जुन के लिए दिया है तथा उसके माध्यम से प्राणि-मात्र का केवल कर्म में ही अधिकार है फल में नहीं, यह सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है। यह कर्मयोग का सिद्धांत संपूर्ण विश्व के मानव मात्र के लिए त्रैकालिक सत्य के रूप में स्वीकृत है।

अभिज्ञानशाकुन्तल : यह महाकवि कालिदास रचित विश्वप्रसिद्ध नाटक है। इसमें 7 अंक हैं जिसमें प्रथम अंक में शकुंतला-दुष्यंत के गान्धर्व विवाह का वर्णन है। इसी प्रसंग को अनेक संदर्भों में महाकवि ने प्रेमपरिपाकपूर्ण दृष्टि से सातों अंकों में विभक्त किया है। संयोग एवं विप्रलंभ श्रृंगार का अद्भुत वर्णन इस नाटक में दृष्टिगत होता है। इस नाटक में श्रृंगार रस अंगी रस के रूप में प्रधान है तथा अन्य रस उसके उपकारक हैं। संस्कृत नाटकों में प्राच्य-पाश्चात्य आलोचकों की दृष्टि में शाकुंतल नाटक सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। इसमें पुरुवंश का राजा दुष्यंत धीरोदात्त नायक है तथा शकुंतला तदनुरूपा प्रधान नायिका है। इस नाटक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका समारंभ जैसी आरण्यक प्रकृति के क्रोड (गोद) में हुआ है, वैसे ही समापन भी उसी रूप में नाटककार ने किया है। अतः प्राकृतिक सौंदर्य में दुष्यंत शकुंतला के प्रेम-प्रसंग का अद्भुत चित्रण इस नाटक की विशेषता है।

कादम्बरी : महाकवि बाणभट्ट ने संस्कृत गद्य साहित्य के अपूर्व गद्यकाव्य कादम्बरी की रचना की। इसमें शूद्रक वर्णन से प्रारंभ कर प्रसंगगत अनेक अवांतर वर्णनों के साथ तारापीड एवं चन्द्रापीड नामक राजाओं का वर्णन किया गया है। अवांतर वर्णनों में विन्ध्याटवी, जाबालि,

शुकनासोपदेश, इन्द्रायुध, महाश्वेता, कादम्बरी इत्यादि का वर्णन अत्यंत सुरुचिपूर्ण विस्तार से आलंकारिक भाषा में किया गया है। न केवल संस्कृत गद्यसाहित्य में, विश्ववाङ्मय में कादम्बरी का शीर्षस्थ स्थान है। महाकवि बाण को साक्षात् बाणी का अवतार माना जाता है। इसलिए बाण से उच्छिष्ट सम्पूर्ण जगत है (बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्)।

नीतिशतक : यह भर्तृहरिरचित अद्भुत नीतिकाव्य है। इसमें अनेक नीतियों का वर्णन किया गया है। यहाँ वर्णित नीतियों में केवल राजनीति के ही अर्थ में नहीं, अपितु आचार-व्यवहार के अर्थ में भी नीति शब्द का प्रयोग किया गया है। भर्तृहरि के द्वारा विलक्षण काव्यात्मक शैली में वर्णित नीति के वचन सभी के लिए सहजरूप से हृदयग्राही हैं। वस्तुतः यह नीतिशतक उत्तम नीतिकाव्य के रूप में संस्कृत साहित्य में प्रतिष्ठित है।

पञ्चतन्त्र : श्री विष्णुशर्मा रचित पञ्चतन्त्र संस्कृत कथा साहित्य में प्रसिद्ध है। इसमें पशुओं, पक्षियों तथा मनुष्यों को पात्र बनाकर कथा की सृष्टि की गई है। इन कथाओं में कला पक्ष यद्यपि उत्कृष्ट नहीं है, तथापि उपदेश देने की विशिष्ट क्षमता प्रतीत होती है। प्रायः सभी कहानियों में नैतिक शिक्षा की प्रधानता है। लोक में आचार, व्यवहार एवं नीति में कुशलता प्रदान करना इन कथाओं का प्रधान लक्ष्य है। इनमें 70 कथाएँ संगृहीत हैं तथा 900 श्लोक हैं। कथासाहित्य में पञ्चतन्त्र का विशिष्ट स्थान है। सुकुमारमति राजकुमारों के लिए कथा के द्वारा नाना नीतियों का उपदेश देना इसका प्रमुख कथ्य है।

अष्टाङ्गहृदय : आयुर्वेद शास्त्र के मर्मज्ञ वाग्भट रचित अष्टाङ्गहृदय आयुर्वेद का प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसमें शरीर के प्रमुख आठ अंगों की चिकित्सा का निरूपण किया गया है। 7000 से अधिक पद्यों में लिखा हुआ यह ग्रंथ अत्यंत लोकप्रिय है, जिसका प्रमाण इस पर लिखी हुई 35 टीकाओं के द्वारा अंगीकृत है। वाग्भट ने कायचिकित्सा के सभी प्रमुख अंगों का निरूपण इस विशिष्ट ग्रंथ में किया है। आधुनिक चिकित्सा जगत् में भी इस ग्रंथ को पर्याप्त महत्त्व प्राप्त है। आयुर्वेद शास्त्र का यह आकर (विशिष्ट) ग्रंथ माना जाता है।

उत्तररामचरित : भवभूति के तीन नाटकों–मालतीमाधव, महावीरचरित और उत्तररामचरित में उत्तररामचरित सर्वोत्कृष्ट नाट्य कृति है। इसमें कवित्व और नाट्य कुशलता दोनों का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। भगवान् श्रीराम के राज्याभिषेक के बाद का उत्तर चरित्र वर्णित होने के कारण इसको उत्तररामचरित कहा जाता है। यह करुण रस प्रधान नाटक है, जो श्रीराम के त्याग और वियोग की पृष्ठभूमि में लिखा गया है। यह नाटक भवभूति की नाट्यकला की चरमोत्कर्ष कृति है।

कथासरित्सागर : कथासाहित्य के उद्भट विद्वान क्षेमेन्द्र द्वारा संकलित बृहत्कथामंजरी का अर्वाचीन विशाल संस्करण कथासरित्सागर है। वस्तुतः इसकी रचना कश्मीरी पंडित सोमदेव ने कश्मीरी नरेश अनंत की महारानी के मनोविनोद के लिए की थी। इसका रचना काल प्रायः 1064 ई. से 1081 के बीच माना जाता है। इसमें कथाओं को 18 लंबकों में विभाजित किया गया है। इन लंबकों में 124 तरंग हैं। वस्तुतः यह कथा की शैली में लिखा विशाल आख्यान है। इसमें 21388-श्लोक हैं। यह संस्कृत साहित्य में कथा साहित्य के शिखरस्थ विकास का उदाहरण है। कथासरित्सागर में ही वेतालपंचविंशति कथा अंतर्भूत है। पञ्चतन्त्र की भी बहुत–सी कथाएँ कथासरित्सागर में दृष्टिगत होती हैं। कथा के उच्च तथा निम्न उभय पक्षों का विवेचन इसमें वर्णित है। रसिकजनों के मनोविनोद के लिए लिखा गया यह विशिष्ट कथा ग्रंथ विश्वसाहित्य में शिखरस्थ है।

सुबोधरामचरित : अर्वाचीन संस्कृतवाङ्मय की लब्धप्रतिष्ठ कवयित्री बालाम्बिका रचित *सुबोधरामचरितम्* एक खण्ड काव्य है। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के लोकधर्मपालक स्वरूप का चित्रण किया गया है। विनय, उदारता, दया, करुणा, शूरता, सौजन्य इत्यादि राम के गुणों का इसमें काव्यात्मक वर्णन किया गया है। विश्वामित्र के द्वारा प्राप्त बला और अतिबला विद्याओं का इसमें विशेष रूप से चित्रण किया गया है। प्रायः अनुष्टुप् छंदों का प्रयोग इस खण्ड काव्य में किया गया है।

पाण्डुलिपि-समीक्षा-संशोधन कार्यगोष्ठी के सदस्य

1. डॉ. विद्या निवास मिश्र
   पूर्व कुलपति,
   सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
   वाराणसी
2. डॉ. आद्याप्रसाद मिश्र
   पूर्व कुलपति
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय
3. प्रो. राजेन्द्र मिश्र
   कुलपति
   सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
   वाराणसी
4. प्रो. शिवजी उपाध्याय
   प्रतिकुलपति
   सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
   वाराणसी
5. डॉ. योगेश्वर दत्त शर्मा
   पूर्व प्रोफेसर संस्कृत
   गुरुकुल कांगड़ी वि.वि., हरिद्वार
6. डॉ. गोला झा
   प्राचार्य
   भगवानदास आदर्श संस्कृत
   महाविद्यालय, हरिद्वार
7. डॉ. यदुनाथ प्रसाद दुबे
   रीडर
   भवन्स मेहता स्नातकोत्तर
   महाविद्यालय, कौशाम्बी
8. श्री वासुदेव शास्त्री
   अवकाशप्राप्त, प्रभारी संस्कृत
   रा.शै.अनु.प्र.प. संस्थान, उदयपुर
9. श्री परमानन्द झा
   पी.जी.टी. संस्कृत,
   रा. उ. मा. बालविद्यालय
   आदर्श नगर, दिल्ली
10. श्रीमती सन्तोष कोहली
    अवकाशप्राप्त उपप्रधानाचार्या,
    सर्वोदय कन्या विद्यालय, कैलाश
    एन्कलेव, रोहिणी, दिल्ली
11. डॉ. रविदत्त पाण्डेय
    अवकाशप्राप्त पी.जी.टी. संस्कृत,
    रा.उ.मा.बा.विद्यालय,
    मानसरोवर पार्क, दिल्ली
12. डॉ. पुरुषोत्तम मिश्र
    टी.जी.टी. संस्कृत,
    रा. उ. मा. बालविद्यालय
    जहाँगीरपुरी, दिल्ली
13. डॉ. सुगन्ध पाण्डेय
    टी.जी.टी. संस्कृत
    केन्द्रीय विद्यालय
    बी.एच.ई.एल., हरिद्वार

एन.सी.ई.आर.टी. संकाय
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग

14. डॉ. दया शंकर तिवारी
    प्रोजेक्ट फेलो, संस्कृत
15. श्रीमती उर्मिल खुंगर
    सेलेक्शन ग्रेड लेक्चरर
16. डॉ. कृष्णचन्द्र त्रिपाठी
    रीडर, संस्कृत
17. डॉ. कमलाकान्त मिश्र
    प्रोफेसर, संस्कृत (संयोजक)

विषयानुक्रमणिका

भारत का संविधान

भाग 4क

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य

अनुच्छेद 51क

मूल कर्त्तव्य – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह -

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों,

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू सके।

वन्दना

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभि–
र्व्यशेम देवहितं यदायुः।।1।।

(ऋग्वेद 1,89,8)

ॐ शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः।।
नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि।
ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि।
तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्।
अवतु वक्तारम्।। ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।।

(तैत्तिरीयोपनिषद् 1,1)

भावार्थः– हे देवगण ! हम कानों से मंगलप्रद वाक्य सुनें। हे यजनीय देवजन ! हम आँखों से मंगलवाहक वस्तु देखें ! हम दृढ़ अवयवों से युक्त शरीर से संपन्न होकर आपकी स्तुति करते हुए प्रजापति द्वारा निर्धारित आयु को प्राप्त करें।।1।।

सूर्य हमारा कल्याण करें। वरुण हमारे लिए सुखकर हों। अर्यमा हमारे लिए कल्याणकर हों। बृहस्पति इन्द्र हमारे लिए सुखकर हों। उरुक्रम (विस्तीर्ण-पाद-क्षेपी) विष्णु हमारे लिए सुखकर हों, सभी उपद्रवों का शमन करें। ब्रह्म को नमस्कार ! हे वायु ! आपको नमस्कार। आप ही प्रत्यक्ष ब्रह्म हैं। मैं आपको ही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा। ऋत कहूँगा। सत्य कहूँगा। वह मेरी रक्षा करें। वह वक्ता की रक्षा करें। मेरी रक्षा करें। वक्ता की रक्षा करें। आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक शांति हो।।2।।

प्रथमः पाठः

उपनिषदाममृतम्

वैदिक वाङ्मय को चार भागों में विभक्त किया गया है - संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद्। उपनिषद् ज्ञान के भंडार हैं। अतः इनको 'ज्ञानकाण्ड' के नाम से भी जाना जाता है। वेदों का अंतिम निष्कर्ष अथवा तत्त्वज्ञान इनमें समाहित है। अतः समस्त वेदों का अंत अर्थात् अंतिम चरमलक्ष्य (तत्त्वज्ञान) का प्रतिपादन होने से ये वेदांत शब्द से भी जाने जाते हैं। समस्त भारतीय दर्शनों के मूल हैं – उपनिषद्। अतः छात्रों को इनमें निहित ज्ञान का सूक्ष्म दिग्दर्शन कराने के लिए यह पाठ यहाँ संकलित है। इसमें ईशावास्य, कठ, मुण्डक, तैत्तिरीय एवं श्वेताश्वतर उपनिषदों से मन्त्र संगृहीत हैं।

विद्यां च चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।। 1।।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति, अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।2।।

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।। 3।।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभिप्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते।।4।।

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।5।।

सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।6।।
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा वा।
ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः।।7।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

विद्या – (देव विषयक ज्ञान), अध्यात्मज्ञान।
अविद्या – लौकिक विद्या।
वेद – विद् + लट् + प्र.पु., ए.व., जानाति, जानता है।
मृत्युम् – मृत्युलोक।
तीर्त्वा – तर्-क्त्वा, पार करके।
अमृतम् – अमरता।
अश्नुते – प्राप्नोति 'अश्' धातु + लट् लकार + प्र.पु. ए.व. (आ.) प्राप्त करता है।
द्वा – द्वौ, वेद में औ, विभक्ति के स्थान में आ आदेश होता है।
सुपर्णा – सुपर्णौ, दो पक्षी (जीवात्मा और परमात्मा)।
सयुजा – सयुजौ सहैव युक्तौ, सदा साथ रहनेवाले।
सखाया – सखायौ, समानाख्यानौ, परस्पर सख्यभाव रखनेवाले।
समानं वृक्षम् – एक वृक्ष (शरीर) को।
परिषस्वजाते – परिष्वक्तवन्तौ, आश्रय लेकर स्थित हैं।
तयोरन्यः – उन दोनों में से एक (जीवात्मा)।
पिप्पलम् – सुखदुःखलक्षणं कर्मफलम्, कर्मों का सुख-दुःखात्मक फल।
अत्ति – अद् धातु + लट् + प्र.पु., एक व., भक्षयति, भोगता है।
अनश्नन् – न अश्नन्, न भुञ्जानः, अश् धातु + लट्–शतृ आदेश, पुं. प्रथमा, एकवचन। भोग न करता हुआ।

अभिचाकशीति	–	केवलं पश्यति, अभि+कश्+यङ् लुक् लट्, प्र.पु.ए.व., देखता ही है।
नाववतु	–	नौ+अवतु, नौ–अस्मद् शब्द के द्वितीया द्विवचन आवाम् के स्थान में नौ आदेश। अवतु– अव् धातु + लोट् + प्र. पु.ए.व.। हम दोनों की रक्षा करे।
भुनक्तु	–	भुज् धातु + लोट् + प्र.पु.ए.व.। पालन करे।
वीर्यम्	–	विद्यादिनिमित्तं सामर्थ्यम्। बल, शक्ति।
करवावहै	–	कृ धातु – आत्मनेपद + लोट् उ.पु. द्वि.व.। करें।
नावधीतम्	–	नौ+अधीतम्, अधीतम् – 'अधि' पूर्वक 'इङ्' धातु से क्त प्रत्यय, नपुं. प्रथमा, एक व. हम दोनों का अध्ययन।
नौ	–	'अस्मद्' के षष्ठी द्विवचन 'आवयोः' के स्थान में 'नौ' अन्वादेश।
अस्तु	–	अस् धातु + लोट्, प्र.पु.ए.व., हो।
तेजस्वि	–	सुष्ठु अधीतम्, सफलम् (अर्थज्ञानयोग्यमस्तु इत्यर्थः, तेज से सम्पन्न)।
मा विद्विषावहै	–	'वि' पूर्वक 'द्विष्' धातु+लोट् (आत्मनेपद) उ.पु., द्वि.व.। विद्वेष न करें।
प्रेयः	–	ऐहिक अभ्युदय। प्रिय + ईयसुन्, 'प्रिय' के स्थान में 'प्र' आदेश, प्रियतर।
श्रेयः	–	प्रशस्य+ईयसुन्, प्रशस्य के स्थान में श्र आदेश, प्रशस्यतर कल्याण।
विविनक्ति	–	वि पूर्वक विचिर् पृथग् भावे धातु + लट् – प्र.पु. एकवचन। विवेचन करता है।
वृणीते	–	वृञ् धातु – आत्मनेपद, लट्, प्र.पु.ए.व.। वरण करता है।
स्यन्दमानाः	–	स्यन्द् धातु + लट् (शानच्) प्रथमा बहुवचन। बहती हुईं।
नामरूपे	–	नाम च रूपं च, द्वन्द्वसमास, नाम और रूप।
उपैति	–	'उप' उपसर्गपूर्वक, इण् धातु + लट्, प्र.पु.एकवचन। उप + एति = उपैति, 'एत्येधत्यूठ्सु' से वृद्धि। प्राप्त होता है।

जयति – जि + लट् + प्र., एकवचन, जीतता है, विजयी होता है।
नानृतम् – न + अनृतम्, असत्य नहीं।
विततः – वि + तन् + क्त, विस्तीर्ण।
देवयानः – देव मार्ग।
येनाक्रमन्त्यृषयः – येन + आक्रमन्ति+ऋषयः, जिस मार्ग से ऋषि गमन करते हैं।
ह्याप्तकामाः – हि+आप्तकामाः, प्राप्त मनोरथ।
गृह्यते – ग्रह् उपादाने (कर्मवाच्य) + लट् + प्र.पु. एकवचन।
विशुद्धसत्त्वः – विशुद्ध अन्तःकरण वाला।
निष्कलम् – संपूर्ण अवयवभेद से रहित।
ध्यायमानः – ध्यै + लट् + शानच्, प्रथमा वि., एकवचन। चिन्तयन्, ध्यानं करता हुआ।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि दीयन्ताम्**
   (क) विद्वान् कया मृत्युं तरति ?
   (ख) विद्वान् कया अमृतं अश्नुते ?
   (ग) समानं वृक्षं कौ परिषस्वजाते ?
   (घ) स्वादु पिप्पलं कः अत्ति ?
   (ङ) कः अनश्नन् अभिचाकशीति ?
   (च) कः श्रेयश्च प्रेयश्च विविनक्ति?
   (छ) देवयानः पन्थाः केन विततः ?
2. **रिक्तस्थानानि पूरयत**
   (क) विद्यया __________ अश्नुते।
   (ख) तयोरन्यः __________ अत्ति।
   (ग) तेजस्वि __________ अस्तु।
   (घ) प्रेयो __________ योगक्षेमाद् वृणीते।
   (ङ) सत्यमेव __________ नानृतम्।

3. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम्

तीर्त्वा, अनश्नन्, संपरीत्य, स्यन्दमानः, विद्वान्, विततः, ध्यायमानः।

4. सन्धिविच्छेदं कुरुत

चाविद्याम्, वेदोपगयम्, विद्ययाऽमृतम्, स्याद्वत्ति, श्रेयश्च, समुद्रेऽस्तम्, उपैति, ह्याप्तकामाः, आक्रमन्त्यृषयः।

5. आशयः स्पष्टीक्रियताम्

(क) विद्ययाऽमृतमश्नुते।

(ख) श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतः।

(ग) तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः
परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।

(घ) सत्यमेव जयति नानृतम्।

(ङ) अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।

द्वितीयः पाठः

कर्मयोगः

प्रस्तुत पाठ, श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय एवम् तृतीय अध्यायों से संगृहीत है। श्रीमद्भगवद्गीता वह विश्वप्रसिद्ध ग्रंथरत्न है, जिसमें भगवान् श्रीकृष्ण ने विषादग्रस्त अर्जुन को कर्त्तव्य का उपदेश देकर धर्मरक्षार्थ युद्ध के लिए प्रेरित किया था। भगवान् ने अर्जुन के माध्यम से संसार को निष्काम कर्म का उपदेश दिया है। कर्मों में कुशलता को ही भगवान् ने योग बताया है। अतः सभी को फलासक्ति के बिना निःसंगभाव से सदा सर्वहित के कार्यों में संलग्न रहना चाहिए। यही उपनिषदों का भी संदेश है– *कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः*।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।1।।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।।2।।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः।।3।।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति।।4।।

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।5।।

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।6।।
कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यगन्कर्तुमर्हसि।।7।।
यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।।8।।
न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन्।।9।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

कर्मण्येवाधिकारः	– कर्मणि+एव–अधिकारः, कर्म करने में ही अधिकार है।
कदाचन	– (अव्यय), कभी भी।
कर्मफलहेतुः	– कर्मों के फल का कारण।
भूः	– भू धातु + लुङ् + म.पु.ए.व., माङ् के योग में अट् का निषेध (न माङ् योगे), बनो।
मा	– मत।
सङ्गोऽस्त्वकर्मणि	– सङ्गः + अस्तु + अकर्मणि, कर्म न करने में आसक्ति (न हो)।
जहातीह	– जहाति + इह, ह्य धातु+लट्+प्र.पु. ए. व., यहाँ, (इस लोक में) त्याग देता है।
सुकृतदुष्कृते	– पुण्य और पाप।
युज्यस्व	– युज् धातु (आत्मनेपद) + लोट् + म. पु. ए. व., लग जा, प्रयत्न करो।।

कुरु	– डुकृञ्+ (परस्मैपद) लोट् + म. पु. ए. व., करो।
ज्यायः	– प्रशस्य + ईयसुन्, नपुं. + प्र. वि. ए. व., श्रेष्ठ है।
ह्यकर्मणः	– हि + अकर्मणः, क्योंकि कर्म न करने से।
शरीरयात्रापि	– लौकिकव्यवहारः (शरीरयात्रा+अपि), शरीर-निर्वाह भी।
प्रसिद्ध्येदकर्मणः	– प्रसिद्ध्येत् + अकर्मणः, कर्म न करने से सिद्ध नहीं होगा।
कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यम्	– कर्मणाम् + अन् + आरम्भात् + नैष्कर्म्यम्, कर्मों का आरंभ किए बिना निष्कर्मता को।
अश्नुते	– अश् लट् प्र. पु. ए. व., प्राप्त करता है।
समधिगच्छति	– सम् + अधि + गम् धातु + लट् + प्र. पु. ए. व., प्राप्त करता है।
जातु	– (अव्यय), कभी।
न तिष्ठत्यकर्मकृत्	– तिष्ठति + अकर्मकृत्, बिना कर्म किए हुए नहीं रहता।
समाचर	– सम् + आङ् + चर् धातु + लोट् + म. पु. ए. व., भलीभाँति करो।
असक्तः	– सञ्ज् धातु + क्त सक्तः न सक्तः असक्तः, नञ् तत्पुरुष समास, अनासक्त होकर।
आचरन्	– आङ् + चर् + शतृ, करता हुआ।
आप्नोति	– आप् धातु + लट् + प्र. पु. ए. व., प्राप्त करता है।

आस्थिताः	– आङ् + स्था धातु + क्त, प्राप्त हुए थे।
लोकसंग्रहमेवापि	– लोकसंग्रहम् + एव + अपि, लोकसंग्रह को भी।
अर्हसि	– अर्ह् धातु + लट् + म. पु. ए. व., योग्य हो।
आचरति	– आङ् + चर् धातु + लट् + प्र. पु. ए. व., आचरण करता है।
इतरः	– अन्य लोग, सब लोग।
अनुवर्तते	– अनु + वृत् धातु + लट् + प्र. पु. ए. व., अनुसरण करता है।
न जनयेत्	– जन् धातु + णिच् + लिङ् + प्र. पु. ए. व., उत्पन्न नहीं करना चाहिए।
कर्मसङ्गिनाम्	– कर्म में आसक्त मनुष्यों का।
जोषयेत्	– जुष् + धातु णिच् लिङ् + प्र. पु. ए. व., करवाना चाहिए, लगाना चाहिए।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तरत**

   (क) अयं पाठः कस्मात् ग्रन्थात् सङ्कलितः ?

   (ख) अस्माकम् अधिकारः कुत्र वर्तते ?

   (ग) अस्माकं सङ्गः कुत्र न भवतु ?

   (घ) अकर्मणः किं ज्यायः ?

   (ङ) जनकादयः केन सिद्धिम् आस्थिताः ?

   (च) लोकः किम् अनुवर्तते ?

2. **रिक्तस्थानानि पूरयत**
   (क) कर्मण्येवाधिकारस्ते मा ________ कदाचन।
   (ख) बुद्धियुक्तो जहातीह उभे ________।
   (ग) तस्माद् योगाय युज्यस्व योगः ________ कौशलम्।
   (घ) स यत्प्रमाणं कुरुते ________।
   (ङ) जोषयेत्सर्वकर्माणि ________ समाचरन्।
3. **पद्यांशानां भावार्थः करणीयः**
   (क) योगः कर्मसु कौशलम्।
   (ख) कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
   (ग) तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
   (घ) लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि।
   (ङ) यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
4. **अधोलिखितप्रयोगेषु समास-विग्रहं कृत्वा समासनाम लिखत**
   कर्मफलहेतुः, सुकृतदुष्कृते, शरीरयात्रा, जनकादयः,
   लोकसंग्रहम्, सर्वकर्माणि, असक्तः, कर्मसङ्गिनाम्।
5. **निम्नाङ्कितप्रयोगाणाम् एकवचनान्तरूपाणि लिखत**
   फलेषु, कर्मसु, कर्मणाम्, गुणैः, जनकादयः, अज्ञानानि, सर्वकर्माणि
6. **निम्नाङ्कितप्रयोगाणां बहुवचनान्तरूपाणि लिखत**
   अधिकारः, कर्म, सिद्धिम्, तिष्ठति, कश्चित्, आचरति, अनुवर्तते।
7. **अधोलिखितक्रियापदानां लकारपुरुषवचननिर्देशं कुरुत**
   जहाति, युज्यस्व, कुरु, अश्नुते, समधिगच्छति,
   तिष्ठति, आप्नोति, अनुवर्तते, जनयेत्, जोषयेत्।

तृतीयः पाठः

कण्वोपदेशः

अभिज्ञानशाकुन्तल, महाकवि कालिदास का प्रसिद्ध नाटक है। उसमें भी चतुर्थ अंक अतीव महत्त्वपूर्ण है। कालिदास-रचित अभिज्ञान-शाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक से उद्‌धृत प्रस्तुत प्रसंग में शकुंतला अपने पतिगृह जा रही है। वहाँ उसे पति एवं परिजनों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? एक पिता के रूप में महर्षि कण्व ने कुशल गृहिणीपद-प्राप्ति के लिए इस विषय में उपदेश दिया है। उसमें प्रकृति-चित्रण अत्यंत मनोरम एवं आशीर्वादात्मक है। यहाँ पुत्री-बिदाई प्रसंग में करुण रस का अत्यंत मार्मिक परिपाक हुआ है। वीतराग महर्षि कण्व भी पुत्री-वियोग के विचारमात्र से अधीर एवं विकल हो जाते हैं।

(प्रविश्य उपायनहस्तौ ऋषिकुमारकौ)

उभौ : इदमलङ्करणम् अलङ्क्रियतामत्रभवती।
(सर्वा विलोक्य विस्मिताः)

गौतमी : वत्स नारद ! कुत एतत् ?

प्रथमः : तातकाश्यपप्रभावात्।

गौतमी : किं मानसी सिद्धिः?

द्वितीयः : न खलु, श्रूयताम्, तत्रभवता वयमाज्ञप्ताः
शकुन्तलाहेतोर्वनस्पतिभ्यः कुसुमान्याहरत इति।
तत इदानीम्-

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं
निष्ठ्यूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित्।
अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितै–
र्दत्तान्याभरणानि तत्किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः।।1।।

गौतमी : जाते ! अनया अभ्युपपत्त्या सूचिता ते भर्तुर्गेहे अनुभवितव्या राजलक्ष्मीरिति।

(शकुन्तला व्रीडां रूपयति)

प्रथमः : एह्येहि अभिषेकोत्तीर्णाय काश्यपाय वनस्पतिसेवां निवेदयावः।

द्वितीयः : (तथा इति निष्क्रान्तौ)।

सख्यौ : अये अनुपयुक्तभूषणोऽयं जनः। चित्रकर्मपरिचये-नाङ्गेषु त आभरण-विनियोगं कुर्वः।

शकुन्तला : जाने वां नैपुणम्। {उभे नाट्येनालङ्कुरुतः}

(ततः प्रविशति स्नानोत्तीर्णः काश्यपः)

काश्यपः : यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुष-श्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।।2।।

(इति परिक्रामति)

सख्यौ : हला शकुन्तले! अवसितमण्डनासि। परिधत्स्व साम्प्रतं क्षौमयुगलम्।

(शकुन्तलोत्थाय परिधत्ते)

गौतमी : जाते एष त आनन्दपरिवाहिणा चक्षुषा परिष्वजमान इव गुरुरुपस्थितः। आचारं तावत्प्रतिपद्यस्व।

शकुन्तला : (सव्रीडम्) तात! वन्दे।

काश्यपः : वत्से!
यथातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।
सुतं त्वमपि सम्राजं सेव पूरुमवाप्नुहि।। 3।।

गौतमी : भगवन् ! वरः खल्वेष; नाशीः।

काश्यपः (ऋक्छन्दसाऽऽशास्ते)
अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः
समिद्वन्तः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः।
अपघ्नन्तो दुरितं हव्यगन्धै
र्वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु।। 4।।

शार्ङ्गरवः : इत इतो भवती। (सर्वे परिक्रामन्ति)

काश्यपः : भो भोः संनिहितास्तपोवनतरवः।
पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।। 5।।

शार्ङ्गरवः : भगवन् ! ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्य इति श्रूयते। तदिदं सरस्तीरम् अत्र संदिश्य प्रतिगन्तुमर्हसि।

काश्यपः : शार्ङ्गरव ! इति त्वया मद्वचनात्स राजा शकुन्तलां पुरस्कृत्य वक्तव्यः।

शार्ङ्गरवः : आज्ञापयतु भवान्।

काश्यपः : अस्मान्साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मन-
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया
भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः।। 6।।

शार्ङ्गरवः - गृहीतः सन्देशः।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

उपायनहस्तौ	–	उपायनम् उपहारः, हस्तयोः ययोः तौ. बहुव्रीहिसमास, उपहार को हाथों में लिए हुए।
अलङ्करणम्	–	अलम् + कृधातु + ल्युट् (अन) नपुं. प्र. वि. ए. व., आभूषण।
अलङ्क्रियताम्	–	अलम् + कृ धातु + लोट् (कर्मवाच्य) – प्र. पु. ए. व., अलङ्कृत कीजिए।
विस्मिताः	–	वि + ष्मिङ् + क्त + टाप् प्र. वि. ब. व., आश्चर्ययुक्त।
मानसी	–	मन से उत्पन्न।
श्रूयताम्	–	श्रु श्रवणे; श्रु (भाववाच्य) लोट् प्र. पु. ए. व.। सुनिए
आज्ञप्ताः	–	आङः + ज्ञप् + क्त + प्र. वि. ब. व.। जिन्हें आदेश दिया गया हो, वे।
आहरतेति	–	(आहरत + इति), आङ् + हृ + लोट् + म. पु. ब.व., लाओ ऐसा।
क्षौमम्	–	रेशमी वस्त्र।
केनचिद्	–	किसी के द्वारा।
इन्दुपाण्डु	–	चंद्रमा के समान धवल (उजले)।
आविष्कृतम्	–	आविस् + कृधातु + क्त, प्रकट किया।
निष्ठ्यूतः	–	निकाल कर दिया।
चरणोपभोगसुलभः	–	पैरों में लगाने के लिए उपयोगी।
लाक्षारसः	–	अलक्तक, महावर।
वनदेवताकरतलैः	–	वनदेवियों के हाथों से।
आपर्वभागोत्थितैः	–	(आपर्वभाग + उत्थितैः) मणिबंध स्थान तक (बाहर), निकले हुए।
दत्तान्याभरणानि	–	(दत्तानि + आभरणानि), आभूषण दिए।
तत्किसलयोद्भेद-प्रतिद्वन्द्विभिः	–	तत्किसलय + उद्भेद – प्रतिद्वन्द्विभिः वृक्षपल्लवों की कांति से स्पर्धा करने वाले।
अभ्युपपत्त्या	–	अभि + उप + पद् धातु + क्तिन् + तृ. वि. ए. व.।

अनुभवितव्या – अनु + भू + तव्यत् (कर्मणि) + टाप्, उपयोग करोगी।

राजलक्ष्मीः – राजलक्ष्मी, महारानी पद की प्रतिष्ठा।

अभिषेकोत्तीर्णाय – अभिषेक + उत्तीर्णाय, अभिषेक – अभि + सिच् धातु + घञ्, स्नान करके निकले हुए।

अनुपयुक्तभूषणः – अनुपयुक्तानि भूषणानि येन सः बहुव्रीहि समास, जिसने गहने नहीं पहने हैं।

चित्रकर्मपरिचयेन – चित्राणां कर्माणि (रचनाः) तेषा परिचयेन – तत्पुरुष समास। चित्रों के परिचय से, चित्रों को देखकर।

आभरणविनियोगम् – आभरणानां विनियोगम् – षष्ठी तत्पुरुष-समास, गहनों को पहनाना।

यास्यत्यद्य – (यास्यति + अद्य) या धातु + लृट् + प्र. पु. ए. व., आज जाएगी।

संस्पृष्टम् – सम् + स्पृश् + क्त + (नपुं.) प्र. वि. ए. व., संबद्ध।

उत्कण्ठया – आकुलता से।

स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषः – स्तम्भिता वाष्पस्य वृत्तिः यस्य सः अतएव कलुषः बहुव्रीहि समास। आँसुओं के प्रवाह को रोकने के कारण कण्ठ अवरुद्ध हो गया है।

वैक्लव्यम् – विकलता।

अरण्यौकसः – अरण्यं ओकः येषां ते बहुव्रीहि समास, वन ही है निवास स्थान जिनका, वे वनवासी।

पीड्यन्ते – पीड् (कर्मवाच्य) + लट् + प्र. पु. ब. व., पीड़ित होते ही रहेंगे।

तनयाविश्लेषदुःखैः – तनयायाः विश्लेषस्य दुःखैः, षष्ठी तत्पुरुष समास, पुत्री के वियोग से जनित दुःखों से।

ययातेः – ययाति नामक एक प्रसिद्ध चंद्रवंशी राजा था, जो दुष्यंत का पूर्वज था।

शर्मिष्ठा – राजा ययाति की पत्नी का नाम था।

क्लृप्तधिष्ण्याः – क्लृप्तं रचितं धिष्ण्यं स्थानम् येषां ते बहुव्रीहि समास, स्थापित, प्रतिष्ठित।

समिद्वन्तः – समिधाओं से युक्त। जिनमें समिधाएँ (लकड़ियाँ) पड़ी हैं।

प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः – प्रान्ते, उपान्ते, संस्तीर्णाः, आस्तृताः, दर्भाः, कुशाः येषाम्, ते, बहुव्रीहि समास, किनारे पर बिछे हुए कुशों से युक्त।

अपघ्नन्तः – नाशयन्तः, नष्ट करती हुई।

वैतानाः वह्नयः – यज्ञ की अग्नियाँ।

पावयन्तु – (पूञ् + णिच् + लोट् + प्र. पु. ब. व.) पवित्र करें।

नादत्ते – न + आदत्ते, आङ् + दा + लट् – प्र. पु. ए. व., ग्रहण नहीं करती है।

प्रियमण्डनापि – प्रियं मण्डनं यस्याः सा, प्रियमण्डन + टाप्, शृङ्गार प्रिय होने पर भी।

कुसुमप्रसूतिसमये – कुसुमानां प्रसूतेः समये। पुष्प की उत्पत्ति के समय में।

अनुज्ञायताम् – अनु + ज्ञा + लोट् (भाववा०) – प्र. पु. ए. व., आज्ञा दीजिए, विदा कीजिए।

ओदकान्तम् – आ + उदक + अन्तम्, जलाशय-तट-पर्यन्त। प्रिय व्यक्ति के पीछे वहीं तक जाना चाहिए, जहाँ तक जलाशय हो।

संदिश्य – सम् + दिश् + क्त्वा (ल्यप्), संदेश कह करके।

प्रतिगन्तुम् अर्हसि – लौट सकते हैं।

प्रतिगन्तुम् – प्रति + गम् + तुमुन्।

अर्हसि – अर्ह् धातु + लट् + प्र. पु. ए. व.।

पुरस्कृत्य – पुरस् (अव्यय) + कृ + क्त्वा (ल्यप्) आगे करके।

संयमधनान् – संयम एव धनं येषाम् ते संयमधनाः तान्, संयम ही धन है जिनका।

कथमप्यबान्धवकृताम् – कथम् अपि + अबान्धवकृताम्। जो बंधु-बांधवों द्वारा स्थापित नहीं की गई है।

सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकम्– (अन्य पत्नियों के समान सामान्य), व्यवहारपूर्वक।

भाग्यायत्तम् – भाग्यस्य आयत्तम् (षष्ठी तत्पुरुष), भाग्य के अधीन।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्
   (क) अयं पाठः कस्मात् नाटकात् संगृहीतः?
   (ख) तरुभिः कानि कानि वस्तूनि शकुन्तलायै दत्तानि?
   (ग) शकुन्तलायाः पतिगृहगमनं विचार्य महर्षिकाश्यपस्य दशा कीदृशी जाता?
   (घ) महर्षिणा काश्यपेन शकुन्तलायै का आशीः दत्ता?
   (ङ) शकुन्तलायाः उत्सवः कदा भवति?
   (च) स्निग्धः जनः कं देशं यावत् अनुगन्तव्यः?
   (छ) प्रियमण्डनापि शकुन्तला पल्लवं किं नादत्ते?

2. अधोलिखितपदानाम् अर्थं लिखित्वा स्ववाक्येषु प्रयोगं कुरुत
   क्षौमम्, आभरणम्, किसलयः, चक्षुषा, सुतम्, स्नेहेन, याति, श्रूयते, आज्ञापयतु।

3. अधोलिखितपदेषु प्रकृतिप्रत्ययविभागं कुरुत
   अनुभवितव्या, उत्तीर्णः, यास्यति, उपस्थितः, पातुम्, याति, प्रतिगन्तुम्, विचिन्त्य, दृश्या।

4. अधोलिखितपदानां सन्धिविच्छेदं कुरुत
   कुसुमान्याहरत, चरणोपभोगसुलभः, एह्येहि, स्नानोत्तीर्णः इतः इतः, तपोवनम्, सेयम्, भाग्यायत्तम्, पातुं न।

5. अधोलिखितपदानां नामनिर्देशपूर्वकं समास-विग्रहं कुरुत
   इन्दुपाण्डुः, चरणोपभोगसुलभः, स्नानोत्तीर्णः, चिन्ताजडम्,
   अरण्यौकसः, प्रियमण्डना, कुसुमप्रसूतिसमये, सरस्तीरम्, मद्वचनात्।

6. निम्नलिखितश्लोकेषु प्रयुक्तानामलङ्काराणां नामानि लिखत–
   (क) क्षौमं केनचित् __________ प्रतिद्वंद्विभिः।
   (ख) यास्यत्यद्य __________ दुःखैर्नवैः।
   (ग) पातुं न प्रथमं __________ सर्वैरनुज्ञायताम्।

चतुर्थः पाठः

लक्ष्म्याः प्रभावः

प्रस्तुत पाठ महाकवि बाणभट्ट द्वारा विरचित सर्वोत्तम गद्यकाव्य "कादम्बरी" नामक कथा से संकलित किया गया है। गुरुकुल से विद्याध्ययन पूर्ण करके राजधानी लौटे राजा तारापीड के पुत्र युवा चन्द्रापीड को 'युवराज' पद पर अभिषेक से पूर्व मन्त्री शुकनास यथोचित उपदेश देते हुए, राजलक्ष्मी एवं यौवन के मदजनित विकारों का वर्णन करते हुए, उनसे दूर रहने का कालोचित उपदेश देते हैं, जो सार्वकालिक रूप से ग्राह्य है। नीतिकारों ने भी कहा है--

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्।।

शास्त्रों के सम्यक् अभ्यास से विमलमति गुरूजनों के उपदिष्ट पथ का अनुसरण करने वाला विवेकी पुरुष ही यौवन एवं राजलक्ष्मी को प्राप्त करके भी दुर्गुणों से सर्वथा असम्पृक्त रह सकता है।

तात ! चन्द्रापीड ! विदितवेदितव्यस्य अधीतसर्वशास्त्रस्य ते नाल्पमपि उपदेष्टव्यम् अस्ति। केवलं च निसर्गतः अतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। अपरिणामोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः।

यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालननिर्मलापि कालुष्यमुपयाति बुद्धिः। इन्द्रियहरिणहारिणी च सततदुरन्तेयमुपभोगमृगतृष्णिका। गुरुपदेशश्च नाम पुरुषाणामखिलमलप्रक्षालनक्षममजलं स्नानम्। विरला हि तेषामुपदेष्टारः।

आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्। इयं हि लब्धाऽपि खलु दुःखेन परिपाल्यते। न परिचयं रक्षति नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्ममनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति।

न क्वचिदपि निर्भरमाबध्नाति पदम्। मधुपानमत्तेव परिस्खलति। सरस्वतीपरिगृहीतम् ईर्ष्ययेव नालिङ्गति। जनं गुणवन्तमपवित्रमिव न स्पृशति। उदारसत्त्वम-मङ्गलमिव न बहु मन्यते। शूरं कण्टकमिव परिहरति। दातारं दुःस्वप्नमिव न स्मरति। विनीतं पातकिनमिव नोपसर्पति। मनस्विनमुन्मत्तमिव उपहसति। यथा यथा चेयं चपला दीप्यते तथा तथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव कर्म केवलमुद्वमति।

एवंविधयापि चानया दुराचारया कथमपि दैववशेन परिगृहीता विक्लवा भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति। दर्शनप्रदानमपि अनुग्रहं गणयन्ति। दृष्टिपातमपि उपकारपक्षे स्थापयन्ति। आज्ञामपि वरप्रदानं मन्यन्ते। मिथ्यामाहात्म्य गर्वनिर्भराश्च न प्रणमन्ति देवताभ्यः। न मानयन्ति मान्यान्। नाभिवादयन्ति अभिवादनार्हान्। नाभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून्। जरावैक्लव्यप्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम्। आत्मप्रज्ञापरिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय। कुप्यन्ति हितवादिने। सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति, तं सम्वर्धयन्ति तेन सह सुखमवतिष्ठन्ते, तस्मै ददति, तं मित्रतामुपजयन्ति, तस्य वचनं शृण्वन्ति, तं बहु मन्यन्ते, यः अहर्निशम् अनवरतमुपर-चिताञ्जलिः अधिदैवतमिव विगतान्यकर्त्तव्यः स्तौति। किं वा तेषां साम्प्रतं, येषामतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणं कौटिल्यशास्त्रं प्रमाणम्।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

विदितवेदितव्यस्य – विदितं वेदितव्यं येन, तस्य। जिसने ज्ञातव्य को जान लिया है।

अधीतसर्वशास्त्रस्य – अधीतं सर्वं शास्त्रं येन, तस्य। जिसने समस्त शास्त्र का अध्ययन कर लिया है।

यौवनप्रभवम् – युवावस्थाजन्य।

अपरिणामोपशमः – न विद्यते परिणामेऽपि उपशमो यस्य। वृद्धावस्था में भी उतरता नहीं है।

शास्त्रजलप्रक्षालननिर्मला– शास्त्रमेव जलम् शास्त्रजलम्, तेन प्रक्षालनेन निर्मला। शास्त्ररूप जल से धोने से निर्मल।

इन्द्रियहरिणहारिणी – इन्द्रियाणि एव हरिणाः, तेषां हारिणी। इन्द्रियरूपी हरिणों को हरनेवाली।

सततदुरन्ता – सततं = निरन्तरं, दुरन्ता = दुःखावसाना। हमेशा परिणाम में (अन्त में) दुःखद होती है।

उपभोगमृगतृष्णिका – उपभोग एव मृगतृष्णिका। विषयभोग रूपी मृगतृष्णा।

कल्याणाभिनिवेशी – कल्याणे = मङ्गले, अभिनिवेशी = आग्रही।

निर्भरम् – निश्चल, स्थिरता पूर्वक।

आबध्नाति पदम् – पैर टिकाती है।

मधुपानमत्तेव – मधुपानेनमत्ता इव, मद्यपान से मतवाली सी।

परिस्खलति – लड़खड़ाती है।

दीपशिखेव – दीपशिखा + इव। दीपक की लौ के समान।

सर्वाविनयाधिष्ठानताम् – सर्वेषाम् अविनयानाम् अधिष्ठानताम्, सभी प्रकार के अविनयों (दुष्कृत्यों) के निवास-स्थान।

मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः– मिथ्या = वृथा यो माहात्म्यगर्वः = माहात्म्याभिमानस्तेन निर्भराः भूताः। झूठे बड़प्पन के अभिमान से फूले हुए।

अभ्युत्तिष्ठन्ति – अभि + उत् + स्था धातु + लट्. प्र. पु. बहुवचन। अभ्युत्थानं कुर्वन्ति। उठते हैं।

जरावैक्लव्यप्रलपितम् – जरा = वृद्धता, तस्या वैक्लव्यम् विफलता, तेन प्रलपितम्। सठियाने का प्रलाप।

उपरचिताञ्जलिः – संयोजितकरपुटः। हाथ जोड़े हुए।

विगतान्यकर्त्तव्यः – विगतम् अन्यकर्त्तव्यं यस्य। दूसरे कर्त्तव्य कार्यों को छोड़े हुए।

अतिनृशंसप्रायोपदेश-निर्घृणम् – अतिनृशंसप्रायः = अतिनिर्दयता बहुलः, उपदेशः= शिक्षा, तेन निर्घृणम् = निर्दयम्। अतिक्रूर कर्मों के उपदेश से भरा हुआ, निर्दय।

आत्मप्रज्ञापरिभवः – आत्मनः = स्वस्य या प्रज्ञा = बुद्धिः, तस्याः परिभवः = निरादरः। अपनी बुद्धि का निरादर।

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्**
   (क) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् संकलितः ?
   (ख) कः अस्य (ग्रन्थस्य) रचयिता ?
   (ग) यौवनारम्भे कीदृशी बुद्धिः प्रायः कालुष्यमुपयाति ?
   (घ) सततदुरन्ता का कथिता ?
   (ङ) यथा यथा लक्ष्मीः दीप्यते तथा तथा किम् उद्भवति ?
   (च) किम् अजलं स्नानम् उक्तम् ?
   (छ) लक्ष्म्या परिगृहीता राजानः कां गच्छन्ति ?
2. **रेखाङ्कितं पदम् आधृत्य संस्कृतेन प्रश्ननिर्माणं क्रियताम् ?**
   (क) इयं हि लब्धाऽपि खलु <u>दुःखेन</u> परिपाल्यते।
   (ख) इन्द्रियहरिणहारिणी इयम् <u>उपभोगमृगतृष्णिका</u>।
   (ग) <u>अधीतसर्वशास्त्रस्य</u> नाल्पमपि उपदेष्टव्यम् अस्ति।
   (घ) <u>अपरिणामोपशमः</u> लक्ष्मीमदः।
   (ङ) लक्ष्मीः <u>शूरं</u> कण्टकमिव परिहरति।
   (च) राजानः कुप्यन्ति <u>हितवादिने</u>।
   (छ) लक्ष्म्याः परिगृहीताः <u>राजानः</u> दर्शनप्रदानमपि अनुग्रहं गणयन्ति।

3. अधोलिखितेभ्यः अर्थेभ्यः कानि पदानि पाठे प्रयुक्तानि यथा – अहोरात्रम् – अहर्निशम्

(क) इदानीम् ____________।

(ख) समीपे गच्छति ____________।

(ग) स्वभावतः ____________।

(घ) संयोजितकरपुटम ____________।

(ङ) निरादरः ____________।

(च) चञ्चला ____________।

4. सप्रसंगं व्याख्यां कुरुत

(क) सरस्वतीपरिगृहीतम् ईर्ष्ययेव नालिङ्गति।

(ख) मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः न प्रणमन्ति देवताभ्यः।

(ग) गुरूपदेशो नाम अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् अजलं स्नानम्।

(घ) न परिचयं रक्षति, नाभिजनम् ईक्षते।

5. उदाहरणमनुसृत्य समस्तपदानि रचयत

विग्रहः	*समस्तपदम्*
यथा–विदितं वेदितव्यं येन सः	विदितवेदितव्यः।
(क) अधीतं सर्वशास्त्रं येन, सः	____________।
(ख) न विद्यते परिणामेऽपि उपशमः यस्य सः	____________।
(ग) शास्त्रम् एव जलम्, तेन प्रक्षालनेन निर्मला	____________।
(घ) उपभोग एव मृगतृष्णिका	____________।
(ङ) अहश्च निशाच	____________।
(च) उपरचिता अञ्जलिः येन सः	____________।

6. अधोलिखितानां कर्मपदानां क्रियापदानि पाठात् विचित्य लिखत

(क) न रूपम् ____________।

(ख) न आचारं ____________।

(ग) दातारं दुःस्वप्नमिव न ____________।

(घ) मनस्विनम् उन्मत्तमिव ____________।

(ङ) न धर्मम् ____________।

(च) न क्वचित् निर्भरं पदम् ____________।

7. अधः उदाहरणानुसारं उपपदविभक्तिं प्रयुज्य वाक्यद्वयं रच्यताम्

(क) यथा-कुप्यन्ति हितवादिने (कुप् धातुप्रयोगे चतुर्थीविभक्तिप्रयोगः)

1. ________ ।
2. ________ ।

(ख) यथा – तस्मै ददति (दा धातुयोगे चतुर्थीविभक्तिप्रयोगः)

1. ________ ।
2. ________ ।

(ग) सचिवोपदेशाय असूयन्ति। (असूय् धातुयोगे चतुर्थीविभक्तिप्रयोगः)

1. ________ ।
2. ________ ।

(घ) तेन सह सुखमवतिष्ठन्ते (सहयोगे तृतीयाविभक्तिप्रयोगः)

1. ________ ।
2. ________ ।

8. लक्ष्म्याः चरित्रं रिक्तस्थानपूर्तिं कृत्वा लिखत

इयं लक्ष्मीः ________ खलु दुःखेन परिपाल्यते। न कुलक्रमम् न . ________ पश्यति। न वैदग्ध्यं ________ । न ________ आकर्णयति। न धर्मम् ________ । न ________ आद्रियते। न विशेषज्ञतां ________ । मधुपानमत्तेव ________ । जनं ________ न स्पृशति। उदारसत्त्वम् अमङ्गलम् इव न बहु ________ । विनीतं ________ नोपसर्पति। एवंविधयापि चानया ________ कथमपि दैववशेन ________ राजानः विक्लवाः भवन्ति ________ च गच्छन्ति।

पञ्चमः पाठः

नीतिश्लोकाः

संस्कृत वाङ्मय सूक्तियों एवं सदुपदेशों का भण्डार है। प्रायः सभी काव्यग्रंथों में भारतीय संस्कृति एवम् उसके उच्च उदांत जीवनमूल्यों का संदेश प्राप्त होता है। जीवन में सर्वविध अभ्युदय, सौख्य, शांति एवं सामाजिक समरसता की प्राप्ति के अचूक सूत्र सर्वत्र अनुस्यूत है, जिनका अनुसरण एवम् अनुपालन कर मानव अपने सत्कर्ममय जीवन में आनंदोपभोग करता हुआ अपने चरमलक्ष्य की प्राप्ति की ओर सहज ही उन्मुख हो सकता है। कवि भर्तृहरि विरचित *'नीतिशतकम्'* एक ऐसा ही अमूल्य ग्रंथ है, जिसमें विविध राजनीतियों का काव्यात्मक वर्णन है। इसके साथ ही पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश आदि ग्रंथों में विविध कथाओं के माध्यम से नीतियों का उपदेश दिया गया है। यहाँ नीतिशतकम् पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश ग्रंथों से ऐसे ही 11 श्लोकों का चयन किया गया है। इनमें विद्यामहिमा, मैत्री, दान, सत्सङ्ग, सन्मित्र, सत्पुरुषलक्षण का मार्मिक वर्णन है।

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापितं नरं न रञ्जयति।। 1।।

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः सममवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किञ्चित् किञ्चिद् बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।। 2।।

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं
विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता
विद्या राजसु पूज्यते न तु धनं विद्याविहीनः पशुः।। 3।।

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।। 4।।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति।। 5।।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।। 6।।

पापान्निवारयति योजयते हिताय
गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः।। 7।।

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालङ्कृतोऽपि सन्।
मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः।। 8।।

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ
प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्।।9।।

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण
लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्।
दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना
छायेव मैत्री खलसज्जनानाम्।। 10।।

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्।। 11।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

अज्ञः — न जानाति इति अज्ञः। अज्ञानी।
आराध्यः — आराधनीय, समझाया जा सकता है, मनाया जा सकता है।
विशेषज्ञः — विशेषज्ञानवान्, विशेषेण जानाति।
ज्ञानलवदुर्विदग्धम् — ज्ञानस्य लवेन दुर्विदग्धम्, ज्ञान के लेशमात्र से अपने को बहुज्ञ समझने वाला।
किञ्चिज्ज्ञः — कुछ-कुछ जाननेवाला, अल्प।
मदान्धः — मदेन अंधः, घमण्ड से अंधा, मतवाला।
समभवम् — सम् + भू + लङ् + उ. पु. ए. व।
सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तम् — सर्वज्ञः + अस्मि + इति + अभवत् + अवलिप्तम्। मैं सर्वज्ञ हूँ यह समझकर गर्वित।
अवलिप्तम् — दृप्त, अव + लिप् + क्त।
व्यपगतः — वि + अप् + गम् + क्त, दूर हो गया।
यशःसुखकरी — यशांसि सुखानि च करोति तच्छीला। यश और सुख प्रदान करने वाला
जाड्यम् — जडस्य भावः, जड + ष्यञ्। जडता।
मानोन्नतिम् — सम्मान की वृद्धि।
पापमपाकरोति — पापम् अपाकरोति, पाप को दूर करती है।
तनोति — तन् + लट्, प्र. पु. ए. व.। फैलाती है।
निन्दन्तु — णिदि (निन्द्) + लोट् प्र. पु. ब. व., निंदा करें।

स्तुवन्तु – ष्टु (स्तु) + लोट्, प्र. पु. ब. व.। स्तुति करें, प्रशंसा करें।

न्याय्यात् – न्याय से युक्त।

पथः – मार्ग से।

पापान्निवारयति – पापात् + निवारयति, पाप कर्म से दूर हटाता है।

आपद्गतम् – विपत्ति में फँसे हुए को।

न जहाति – न त्यजति, नहीं छोड़ता है।

सन्मित्रलक्षणम् – सत् + मित्रलक्षणम्, सतो मित्रस्य लक्षणम्, अच्छे मित्र का लक्षण।

प्रवदन्ति – प्र + वद् + लट्, प्र. पु. ब. व.। कथयन्ति, बताते हैं।

परिहर्तव्यः – परि + हृ + तव्य। छोड़ना चाहिए।

विद्ययालङ्कृतोऽपि – विद्यया + अलङ्कृतः + अपि, विद्या से अलङ्कृत (सम्पन्न) भी।

विपदि – विपत्तौ, विपत्ति में।

अभ्युदये – उन्नतौ, उन्नति में।

युधि – युद्धे, युद्धभूमि में।

व्यसनम् – आसक्ति।

श्रुतौ – वेदादि शास्त्राभ्यास में।

प्रकृतिसिद्धम् – स्वभाव से सिद्ध।

आरम्भगुर्वी – आरम्भे गुर्वी, आरंभ में बड़ी (घनिष्ठ)।

क्षयिणी – क्षीण होने वाली, घटने वाली।

पूर्वार्ध-परार्द्ध-भिन्ना – पूर्वं च तत् अर्द्धम् – पूर्वार्द्धम् – कर्मधारय। परं च तत् अर्द्धम् – परार्द्धम् – पूर्वार्द्धं च परार्द्धं च पूर्वार्द्धपरार्द्धे, द्वन्द्वसमास, ताभ्यां भिन्ना पञ्चमी तत्पुरुष। पूर्वार्द्ध और परार्द्धभेद से भिन्न।

छायेव – छाया + इव, परछाई के समान।

खलसज्जनानाम् – खलाश्च सज्जनाश्च खलसज्जनास्तेषाम्। दुर्जनों और सज्जनों की।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्

(क) ब्रह्मापि कीदृशं नरं रञ्जयितुं न शक्नोति ?
(ख) विद्या कुत्र पूज्यते ?
(ग) धियो जाड्यं का हरति ?
(घ) वित्तस्य काः तिस्रः गतयः भवन्ति ?
(ङ) धीराः कस्मात् पदं न प्रविचलन्ति ?
(च) दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना छायेव केषां मैत्री ?
(छ) विद्ययाऽलङ्कृतोऽपि कः परिहर्तव्यः ?

2. रेखाङ्कितपदानि आधृत्य संस्कृतेन प्रश्ननिर्माणं कुरुत

(क) सुकृतिनां <u>यशःकाये</u> जरामरणजं भयं नास्ति।
(ख) <u>महात्मनाम्</u> अभ्युदये क्षमा भवति।
(ग) <u>मणिना</u> भूषितोऽपि सर्पः भयङ्करः।
(घ) सत्सङ्गतिः पुंसां <u>कीर्तिं</u> दिक्षु तनोति।
(ङ) <u>विद्याविहीनः</u> पशुः।
(च) सन्मित्रं <u>पापात्</u> निवारयति।
(छ) यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य <u>तृतीय</u> गतिर्भवति।

3. उदाहरणम् अनुसृत्य पदानि रचयत

यथा –प्र + छद् + क्त = प्रच्छन्नः

(क) दह् + क्त = ____________
(ख) अव + लिप् + क्त = ____________
(ग) परि + हृ + क्त = ____________
(घ) वि + हा + क्त = ____________
(ङ) वि + अस् + क्त = ____________
(च) भिद् + क्त = ____________
(छ) गुह् + क्त = ____________

4. अधः 'क' स्तम्भस्य पङ्क्त्या सह 'ख' स्तम्भात् समुचितां पंक्तिं विचित्य मेलयत

'क' स्तम्भः	*'ख' स्तम्भः*
(क) दानं भोगो नाशः	(क) पापमपाकरोति।
(ख) सदसि वाक्पटुता	(ख) रससिद्धाः कवीश्वराः।
(ग) आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण	(ग) अवलिप्तं मम मनः।
(घ) जयन्ति ते सुकृतिनः	(घ) सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
(ङ) मानोन्नतिं दिशति	(ङ) तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
(च) तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवत्	(च) युधि विक्रमः।
(छ) अज्ञः सुखमाराध्यः	(छ) लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्।

5. अधः पाठे प्रयुक्तानां छन्दसां नामानि लिखितानि। केषाञ्चित् त्रयाणां छन्दसाम् उदाहरणानि पाठात् विचित्य लिखत

(क) शार्दूलविक्रीडितम्

(ख) शिखरिणी

(ग) वसन्ततिलका

(घ) अनुष्टुप्

(ङ) उपजातिः

6. विलोमपदानि पाठात् विचित्य लिखत

	विलोमपदानि
(क) स्तुवन्तु	________
(ख) गच्छतु	________
(ग) युगान्तरे	________
(घ) सम्पदि	________
(ङ) पश्चात्	________
(च) सज्जनानाम्	________
(छ) पुण्यात्	________

7. **अधोलिखितानां श्लोकानां रिक्तस्थानानि पूरयत**

(क) अज्ञः सुखम् ________ सुखतरम् ________ विशेषज्ञः।
ब्रह्मापि नरं न ________।।

(ख) यदा किञ्चित् किञ्चिद् ________।
तदा मूर्खोऽस्मीति ________ इव मदो मे ________।।

(ग) ________ ते सुकृतिनो ________ कवीश्वराः।
नास्ति येषां ____ ____ जरामरणजं ________।।

8. **आशयं स्पष्टीकुरुत**

(क) विद्याविहीनः पशुः।
(ख) सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।
(ग) न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।
(घ) प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्।
(ङ) छायेव मैत्री खलसज्जनानाम्।

षष्ठः पाठः

यथा बीजं तथा फलम्

प्रस्तुत पाठ पञ्चतन्त्र के 'लब्धप्रणाश' नामक चतुर्थ तन्त्र की प्रथम कथा (गङ्गदत्तप्रियदर्शनयोः) का संक्षेप है। इसमें गङ्गदत्त नामक मेढक द्वारा अपने कुटुम्बियों से बदला लेने की भावना से प्रियदर्शन नामक सर्प को बुलाकर उन्हें खिला दिए जाने की दुष्टता का निरूपण किया गया है, जिसके फलस्वरूप सर्प गङ्गदत्त के भी बाल-बच्चों को खा जाता है, ठीक ही कहा गया है – जो जैसा बीज बोता है, वैसा ही फल पाता है।

कस्मिंश्चित् कूपे गङ्गदत्तो नाम मण्डूकराजः प्रतिवसति स्म। स कदाचिद् दायादैरुद्वेजितोऽरघट्टघटीमारुह्य निष्क्रान्तः। अथ तेन चिन्तितं यत् 'कथं तेषां दायादानां मया प्रत्युपकारः कर्त्तव्यः ?' एवं चिन्तयन् बिले प्रविशन्तं प्रियदर्शनाभिधं कृष्णसर्पमपश्यत्। तं दृष्ट्वा भूयोऽप्यचिन्तयत् यत् 'एनं तत्र कूपे नीत्वा सकलदायादानामुच्छेदं करोमि।' उक्तं च

शत्रुमुन्मूलयेत्प्राज्ञस्तीक्ष्णं तीक्ष्णेन शत्रुणा।
व्यथाकरं सुखार्थाय कण्टकेनैव कण्टकम्।।

एवं विभाव्य बिलद्वारं गत्वा तमाहूतवान् - एहि, एहि प्रियदर्शन, एहि। "तच्छ्रुत्वा सर्पश्चिन्तयामास" य एष मामाह्वयति स स्वजातीयो न भवति। यतो नैषा सर्पवाणी। तदत्रैव दुर्गे स्थितस्तावद्वेद्मि-कोऽयं भविष्यति ? "आह च-" भोः को

भवान् ? "स आह -" अहं गङ्गदत्तो नाम मण्डूकाधिपतिस्त्वत्सकाशे मैत्र्यर्थमभ्यागतः। "तच्छ्रुत्वा सर्प आह -" भो, अश्रद्धेयमेतद् यत् "तृणानां वह्निना सह संगमः।" गङ्गदत्त आह - भोः, सत्यमेतत्। स्वभाववैरी त्वमस्माकम् परं परपरिभवात् प्राप्तोऽहं ते सकाशम्। "सर्प आह -" कथय, कस्मात्ते परिभवः ? "स आह -" दायादेभ्यः। "सोऽप्याह-" क्व ते आश्रयः- वाप्यां, कूपे, तडागे, ह्रदे वा ? "तत् कथय स्वाश्रयम्।" तेनोक्तम्-"पाषाणचयनिबद्धे कूपे। "सर्प आह-" अहो, अपदा वयम्। तन्नास्ति मे तत्र प्रवेशः। प्रविष्टस्य च, स्थानं नास्ति, यत्र स्थितस्तव दायादान् व्यापादयामि। तद् गम्यताम्।

गङ्गदत्त आह - "भोः, समागच्छ त्वम्। अहं सुखोपायेन तत्र तव प्रवेशं कारयिष्यामि। तथा तस्य मध्ये जलोपान्ते रम्यतरं कोटरमस्ति तत्र स्थितस्त्वं लीलया दायादान् व्यापादयिष्यसि।"

तच्छ्रुत्वा सर्पो व्यचिन्तयत्-"अहं तावत् परिणतवयाः कदाचित् कथंचिन्मूषकमेकं प्राप्नोमि। तत् सुखावहो जीवनोपायोऽयमनेन कुलाङ्गारेण मे दर्शितः। तद् गत्वा तान् मण्डूकान् भक्षयामि" इति।

एवं विचिन्त्य तमाह- "भोः गङ्गदत्त, यद्येवं तदग्रे भव, येन तत्र गच्छावः।" गङ्गदत्त आह- "भोः प्रियदर्शन, अहं त्वां सुखोपायेन तत्र नेष्यामि, स्थानं च दर्शयिष्यामि। परं त्वयाऽस्मत्परिजनो रक्षणीयः। केवलं यानहं तव दर्शयिष्यामि, त एव भक्षणीयाः" इति। सर्प आह- "साम्प्रतं त्वं मे मित्रं जातम्। तन्न भेतव्यम्। तव वचनेन भक्षणीयास्ते दायादाः।" एवमुक्त्वा बिलान्निष्क्रम्य तमालिङ्ग्य च, तेनैव सह प्रस्थितः।

अथ कूपमासाद्यारघट्टघटिकामार्गेण सर्पस्तेन सह तस्यालयं

गतः। ततश्च गङ्गदत्तेन कृष्णसर्पं कोटरे धृत्वा दर्शितास्ते दायादाः। ते च तेन शनैः शनैर्भक्षिताः। अथ मण्डूकाभावे सर्पेणाभिहितम् "भद्र, निःशेषितास्ते रिपवः। तत् प्रयच्छ अन्यन्मे किञ्चित् भोजनं यतोऽहं त्वयात्रानीतः।" गङ्गदत्त आह-"भद्र, कृतं त्वया मित्रकृत्यं तत्साम्प्रतम् घटिकायन्त्रमार्गेण गम्यताम्" इति। सर्प आह "भो गङ्गदत्त ! न सम्यगभिहितं त्वया। कथमहं तत्र गच्छामि ? मदीयबिलदुर्गमन्येन रुद्धं भविष्यति। तस्मादत्रस्थस्य मे मण्डूकमेकैकं स्ववर्गीयं प्रयच्छ। नो चेत् सर्वानपि भक्षयिष्यामि" इति।

तच्छ्रुत्वा गङ्गदत्तो व्याकुलमना व्यचिन्तयत्-"अहो, किमेतन्मया कृतं सर्पमानयता ? तद् यदि निषेधयिष्यामि तत् सर्वानपि भक्षयिष्यति ?"

एवं चिन्तयतस्तस्य तेन सर्पेण शनैः शनैः सकलमपि मण्डूककुलम् यथाकालं कवलितम्।

साध्विदमुच्यते-

यो यद् वपति बीजं हि लभते तादृशं फलम्।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

कस्मिंश्चित् कूपे – कस्मिन् + चित्, (अव्यय), किसी कुँए में।

प्रतिवसति स्म – प्रति + वस् + लट् + प्र. पु. ए. व., स्म – अव्यय (भूतकाल द्योतक)। निवास किया करता था।

कदाचित् – (अव्यय), कभी।

दायादैः – दायं भागम् अदन्ति, खादन्ति इति दायादाः तैः, (दाय + अद् + अच्), हिस्सा खाने वालों से (रिश्तेदारों से)।

उद्वेजितः – (उत् + विज् + णिच् + क्त) त्रस्त, क्षुब्ध, परेशान।

अरघट्टघटीम् – रहट में प्रयुक्त किया जाने वाला डोल।

आरुह्य — आङ् + रुह् + क्त्वा, ल्यप्, सवार होकर, चढ़कर।
निष्क्रान्तः — निस् + क्रम + क्त, निकल गया, बाहर चला गया।
प्रत्यपकारः — प्रति + अप + डुकृञ् + घञ्, अपकार के बदले में किया गया कार्य।
कर्त्तव्यः — डुकृञ् + तव्यत्, करना चाहिए।
चिन्तयन् — चिन्त् + णिच् + शतृ + पुँ प्र. ए. व., विचार करता हुआ।
प्रविशन्तम् — प्र + विश् + शतृ + पुँ. द्वि. ए. व., प्रवेश करने वाले को।
अपश्यत् — दृश् (पश्य्) + लङ् + प्र. पु. ए. व., देखा।
उच्छेदम् — उत् + छिद् + घञ् + द्वि. ए. व., विनाश को।
आहूतवान् — आङ् + ह्वे + क्तवत् – पुँ. प्र. ए. व., बुलाया।
आह्वयति — आङ् + ह्वे + लट् + प्र. पु. ए. व., बुलाता है, पुकारता है।
तावद्वेद्मि — तावत् + विद् + लट् + उ. पु. ए. व., तो जानता हूँ।
मैत्र्यर्थमभ्यागतः — मैत्री + अर्थम् + अभि + आङ् + गम् + क्त। मित्रता के लिए आया हुआ।
परिभवः — पराजय, अपमान।
वाप्याम् — बावड़ी में।
व्यापादयामि — मारता हूँ।
पाषाणचयनिबद्धे — पत्थरों को चुनकर बनाए गए (कुँए) में।
अपदाः — बिना पैरों वाले।
परिणतवयाः — (परिणतं वयः येषां ते, बहुव्रीहि समास) वृद्ध।
दर्शयिष्यामि — दृश् + णिच् + लृट् + उ. पु. ए. व., दिखाऊँगा।
कुलाङ्गारेण — कुल के विनाश के लिए अङ्गार (चिनगारी) के समान, अपने वंश को नष्ट करने वाले ने।
प्रस्थितः — प्र + स्था + क्त, प्रस्थान किया।
आसाद्य — आङ् + सद् + णिच् + क्त्वा + ल्यप्, पहुँचकर।
अभिहितम् — अभि + धा + क्त, कहा।
निःशेषिताः — समाप्त कर दिए।
स्ववर्गीयम् — अपनी जाति के।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**

   (क) किं–नामधेयो मण्डूकराजः कूपे वसति स्म ?

   (ख) मण्डूको बिले प्रविशन्तं सर्पं दृष्ट्वा किं चिन्तयति ?

   (ग) मण्डूकस्य भयं केभ्यः आसीद् ?

   (घ) केन मार्गेण सर्पो मण्डूकेन सह तस्यालयं गच्छति ?

   (ङ) मण्डूकाभावे सर्पेण किमभिहितम् ?

   (च) व्यथाकरं कण्टकं सुखाय केन उन्मूल्यते ?

   (छ) कूपे सर्पसङ्कल्पं श्रुत्वा व्याकुलमना गङ्गदत्तः किम् अचिन्तयत् ?

2. **(क) रिक्तस्थानपूर्तिमाध्यमेन अधः सन्धिं / सन्धिच्छेदं कुरुत**

   (क) एहि + एहि = ________ ।

   (ख) ________ + ________ = नैषा।

   (ग) तैः + ________ = तैरेव।

   (घ) ________ + श्रुत्वा = तच्छ्रुत्वा।

   (ङ) यदि + एवम् = ________ ।

   (च) ________ + ________ = साध्विदम्।

   (छ) कण्टकेन + एव ________ ।

   (ख) अधः संयोगे रिक्तस्थानानि पूरयत

   (क) अरघट्टघटीम् + आरुह्य = ________ ।

   (ख) कृष्णसर्पम् + अपूरयत् = ________ ।

   (ग) ________ + ________ = अश्रद्धेयमेतत्।

   (घ) यान् + ________ = यानहम्।

   (ङ) त्वम् + उक्त्वा = ________ ।

3. **उदाहरणमनुसृत्य समस्तपदानां विग्रहं कुरुत, समासनामापि च लिखत**

	समस्तपदम्	*विग्रहः*	*समासनाम*
उदाहरणम्–	व्याकुलमनाः	व्याकुलं मनः यस्य सः	बहुव्रीहि
(क)	प्रियदर्शनः	----------	----------
(ख)	कृष्णसर्पः	----------	----------
(ग)	सर्पवाणी	----------	----------
(घ)	परिणतवयाः	----------	----------
(ङ)	यथाकालम्	----------	----------
(च)	मण्डूककुलम्	----------	----------

4. **उदाहरणमनुसृत्य रिक्तस्थानानि पूरयित्वा पदानि रचयत**

उदाहरणम् – चिन्त् + शतृ, षष्ठी ए.व. = चिन्तयतः

(क) अभि + धा + क्त = ________

(ख) ________ + णिच् + ________ = दर्शितः

(ग) रक्ष् + अनीयर् = ________

(घ) ________ + क्त्वा = उक्त्वा

(ङ) निः + क्रम् + ल्यप् = ________

(च) भी + ________ = भेतव्यम्।

(छ) आ + ह्वे + क्तवत् = ________

5. **सप्रसङ्ग व्याख्यां कुरुत**

(क) अश्रद्धेयमेतत् यत् तृणानां वह्निना सह सङ्गमः।

(ख) कण्टकं कण्टकेनैव उन्मूल्यते।

(ग) यो यद् वपति बीजं लभते हि तादृशं फलम्।

6. अधोलिखितानि कथनानि कः कम् प्रति कथयति

कथनम्	*कः*	*कं प्रति*
(क) भोः! स्वभाववैरी त्वमस्माकं परं परपरिभवात् प्राप्तोऽहं ते सकाशम्।	______	______
(ख) अपदा वयम्। तन्नास्ति मे तत्र प्रवेशः।	______	______
(ग) भोः! समागच्छ त्वम्। अहं सुखोपायेन तत्र तव प्रवेशं कारयिष्यामि।	______	______
(घ) साम्प्रतं त्वं मे मित्रं जातम्। तन्न भेतव्यम्।	______	______
(ङ) तस्मादत्रस्थस्य मे मण्डूकमेकैकं स्ववर्गीयं प्रयच्छ।	______	______

7. मजूषातः अव्ययपदानि विचित्य अधोलिखितानि वाक्यानि पूरयत

(क) ______ उक्त्वा बिलात् निष्क्रम्य तेन ______ सह प्रस्थितः।

(ख) सर्प आह "______ त्वं मे मित्रं जातम्।"

(ग) ______ तेन चिन्तितं ______ कथं मया दायादानां प्रत्यपकारः कर्त्तव्यः।

(घ) ______ चिन्तयन् बिले प्रविशन्तं कृष्णसर्पं दृष्ट्वा ______ अचिन्तयत्।

(ङ) एनं ______ कूपे नीत्वा दायादानाम् उच्छेदं करोमि।

(च) अहं गङ्गदत्तः तव ______ मैत्र्यर्थमागतः। सर्पः उवाच, "तृणानां वह्निना ______ संगमः।"

(छ) ______ तस्य मध्ये रम्यतरं कोटरमस्ति।

(ज) सर्पः अचिन्तयत् "अहं ______ परिणतवयाः ______ मूषकमेकं प्राप्नोमि।

सकाशे, तावत्, भूयः, अथ, एवम्, अपि, यत्, क्व, तत्र, सह, तथा, कदाचित्, साम्प्रतम्, एव, कथम्

सप्तमः पाठः

औषधम्

प्रस्तुत आयुर्वेदशास्त्रीय प्रसिद्ध ग्रंथ 'अष्टाङ्गहृदयम्' के रोगचिकित्सा के विभिन्न अध्यायों से उद्धृत है। आयुर्वेदशास्त्र के उद्भट विद्वान् वाग्भट्ट की यह अमरकृति है, जिसमें चरक एवं सुश्रुत का सार पूर्णरूप से संगृहीत है। मूलग्रंथ में एक-एक व्याधि के अनेक उपचार दिए गए हैं। यहाँ पर (इस पाठ में) ज्वर, स्वराभिघात, राजयक्ष्मा, हृदयरोग, मधुमेह, पथरी, पेटदर्द एवं पीलिया इन रोगों का एकविध उपचार ही दिया गया है। अन्त में सदाचार द्वारा सदैव नीरोग रहा जा सकता है, इस बात पर बल दिया गया है।

पाचयेत्कटुकां पिष्ट्वा कर्परेऽभिनवे शुचौ।
निष्पीडितो घृतयुतस्तद्रसो ज्वरदाहजित्।। 1।।

शर्कराक्षौद्रमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह।
पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोऽभिहतः स्वरः।। 2।।

जीवन्तीं मधुकं द्राक्षां फलानि कुटजस्य च।
पुष्कराह्वं शटीं कृष्णां व्याघ्रीं गोक्षुरकं बलाम्।। 3।।

नीलोत्पलं तामलकीं त्रायमाणां दुरालभाम्।
कल्कीकृत्य घृतं पक्वं रोगराजहरं परम्।। 4।।

हृद्रोगे वातजे तैलं मस्तुसौवीरवक्रवत्।
पिबेत्सुखोष्णं सबिडं गुल्मानाहार्तिजिच्च तत्।। 5।।

मधुमेहित्वमापन्नो भिषग्भिः परिवर्जितः।
शिलाजतुतुलामद्यात्प्रमेहार्तः पुनर्नवः।।6।।

गन्धर्वहस्तबृहतीव्याघ्री गोक्षुरकेक्षुरात्।
मूलकल्कं पिबेद् दध्ना मधुरेणाश्मभेदनम्।।7।।

नीलिनीं निचुलं व्योषं क्षारौ लवणपञ्चकम्।
चित्रकं च पिबेत्पूर्णं सर्पिषोदरगुल्मनुत्।।8।।

पिबेन्निकुम्भकल्कं वा द्विगुणं शीतवारिणा।
कुम्भस्य चूर्णं सक्षौद्रं त्रैफलेन रसेन वा।।9।।

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसम्।
प्रातः प्रातर्मधुयुतं कामलार्ताय योजयेत।।10।।

नित्यं हिताहारविहारसेवी
समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावा
नाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।।11।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

पाचयेत्	–	पच् + णिच् + लोट् + प्र. पु. ए. व.। पकावे।
कटुकाम्	–	कटकी।
पिष्ट्वा	–	पिष् + क्त्वा। पीसकर।
कर्परे	–	खरल में, उलूखल में।
अभिनवे	–	अभिनव + सप्तमी ए. व., नए।
शुचौ	–	शुचि + सप्तमी ए. व., शुद्ध।
निष्पीडितः	–	निचोड़ा हुआ।
घृतयुतः	–	घी से युक्त।
तद्रसः	–	वह रस।

ज्वरदाहजित्	–	ज्वरदाहं जयति, ज्वरदाह + जिधातु + क्विप्। ज्वरदाह (ज्वरपीडा) अर्थात् बुखार को शान्त करने वाला है।
शर्कराक्षौद्रमिश्राणि	–	क्षुद्राभिः मधुमक्षिकाभिः निर्मितम् क्षौद्रम – मधु। शक्कर एवं शहद से मिले हुए।
शृतानि	–	पके हुए।
मधुरैः	–	मीठे।
उच्चैर्वदतः	–	उच्चस्वर से बोलते हुए, लड़खड़ाते हुए।
अभिहतः	–	अभि + हन् + क्त, टूटा हुआ, भङ्ग हुआ।
स्वरः	–	स्वर, वाणी।
जीवन्तीम्	–	गुडूची, जीवनी, शाकश्रेष्ठा मङ्गल्या आदि नामों से प्रसिद्ध लता।
मधुकम्	–	मधु, शहद।
द्राक्षाम्	–	अँगूर को।
कुटजस्य फलानि	–	कुटज के फल।
पुष्कराह्वम्	–	पुष्करमूलम्, एक औषधि का नाम, कुष्ठवृक्ष का मूल।
शटीम्	–	गन्धमूली, शटी नामक जड़ी बूटी कचूर।
कृष्णाम्	–	पिप्पली।
व्याघ्रीम्	–	कण्टकारी, एक औषधि।
गोक्षुरकम्	–	गोखुरः, गोक्षुरः, प्रसिद्ध औषधि।
बलाम्	–	भद्रा, भद्रबला नामक औषधि।
नीलोत्पलम्	–	नीलकमल।
तामलकीम्	–	भूम्यामलरी, तमालिनी औषधिविशेष का नाम।
त्रायमाणाम्	–	भयनाशिनी, भद्रनामिका औषधिविशेष का नाम।
दुरालभाम्	–	समुद्रान्ता, गान्धारी, औषधिविशेष का नाम।
कल्कीकृत्य	–	कल्क करके। लेई बनाकर।
पक्वम्	–	पका हुआ।

रोगराजहरम्	–	रोगाणां राजा रोगराजः राजयक्ष्मा (टी. बी.) आर्ति (पीडा को) जित्, हरने वाला तिल्ली, वृद्धि नामक रोग की पीड़ा को हरनेवाला।
हृद्रोगे	–	हृदयरोग में।
वातजे	–	वात (वायु) से उत्पन्न।
मस्तुसौबीरतक्रवत्	–	मस्तु – दधिजलम्, दही का पानी, सौबीरम् – यवैर्निर्मितः पेयविशेषः, काँजी।
सुखोष्णम्	–	कवोष्ण, हल्का गर्म।
सबिडम्	–	नमक सहित।
गुल्मानाहार्तिजित्	–	गुल्मस्यानाहः गुल्मानाहः गुल्मानाहस्य आर्तिं जयति इति गुल्मानाहार्तिजित् गुल्म (तिल्ली के) + आनाह (वृद्धि की) + आर्ति (पीडा को) जित् – हरनेवाला।
मधुमेहित्वम् आपन्नः	–	मधुमेह रोग को प्राप्त, मधुमेह रोग से ग्रस्त।
भिषग्भिः	–	वैद्यों के द्वारा।
परिवर्जितः	–	छोड़ दिया गया, (असाध्य समझकर) जिसकी चिकित्सा छोड़ दी गई हो।
शिलाजतुतुलाम्	–	शिलाजतु (नपुं.) – 'शिलाजीत' नाम से प्रसिद्ध औषधि। तुला तोला (एक परिमाण)।
अद्यात्	–	खावे, अद् धातु + विधिलिङ् + प्र. पु. ए. व.।
प्रमेहार्तः	–	प्रमेहरोग से पीड़ित।
पुनर्नवः	–	(नव यौवन सम्पन्न, पूर्णस्वस्थ) फिर से नया ।
गन्धर्वहस्तः	–	एरण्ड वृक्षः, रेंड़ या अरण्डी, नाम से प्रसिद्ध।
बृहती	–	वनवृन्ताकी (वनभटैया)।
इक्षुरः	–	इक्षुरकः कोकिलावृक्षः 'कुलिया खारा' (लोकभाषा में)।
मूलकल्कम्	–	मूल नामक औषधि की पीठी (लेई)।
मधुरेण दध्ना	–	मीठे दही के साथ।
अश्मभेदनम्	–	पाषाण पथरी को तोड़ने वाला।
नीलिनीम्	–	नीली, श्रीफली, मधुपर्णिका वृक्षविशेष का नाम।

निचुलम् – इज्वलवृक्षः, वेतसवृक्षः।
व्योषम् – शुण्ठी मरीच पिप्पलीनां समाहारः (सोठ, मरीच, पिप्पली) त्रिकटु।
क्षारौ – दो प्रकार के क्षार।
लवणपञ्चकम् – पाँच प्रकार के नमक 1. सौवर्चलम् 2. सैन्धवम्, 3. विटम् 4. औद्भिदम् 5. सामुद्रम्।
चित्रकम् – ओषधिविशेष का नाम।
चूर्णम् – चूर्ण (पाउडर)।
सर्पिषा – घी के द्वारा।
उदरगुल्मनुत् – 'उदरगुल्म' नामक रोग को नष्ट करने वाला।
निकुम्भकल्कम् – निकुम्भः दन्तिरः वृक्षः, तस्य कल्कम् पिष्टिः।
द्विगुणम् – दो गुना।
शीतवारिणा – ठण्डे जल से।
कुम्भस्य – गुग्गुल का।
सक्षौद्रम् – क्षौद्र – मधु के साथ।
त्रैफलेन – त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला) से निर्मित।
रसेन – रस से।
त्रिफलायाः – त्रिफला (आँवला, हरड़, बहेड़ा)।
गुडूच्या – गुडुची का।
दार्व्या – 'दारूहरिद्रा' नामक औषधि।
निम्बस्य – नीम के।
रसम् – रस का।
मधुयुतम् – शहद मिला हुआ।
कामलार्ताय – कामला + आर्ताय कामला – पाण्डुरोग का भेद उससे पीड़ित को।
योजयेत् – युज् + णिच्, विधिलिङ्, प्र. पु., ए. व., मिलावे। पिलावे (यहाँ विशेष अर्थ है)।
हिताहारविहारसेवी – हितकर, आहार विहार का सेवन करने वाला।
समीक्ष्यकारी – सोचविचार कर कार्य करनेवाला।

विषयेषु	–	विषयों में।
असक्तः	–	आसक्तिरहित।
दाता	–	दानशील।
सत्यपरः	–	सत्यनिष्ठ, सत्यपालक।
क्षमावान्	–	क्षमाशील, सहिष्णु।
आप्तोपसेवी	–	आप्तपुरुष की सेवा करने वाला आप्त – यथार्थवक्ता सदाचारी।
अरोगः	–	नीरोग, रोगरहित।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**
   (क) ज्वरदाहरोगी कम् ओषधिं सेवेत?
   (ख) शर्कराक्षौद्रमिश्राणि शृतानि पयांसि कस्मिन् रोगे पिबेत्?
   (ग) जीवन्तीं मधुकं द्राक्षां कुटजस्य फलानि च को रोगी गृह्णीयात्?
   (घ) मधुमेहित्वमापन्नः कम् ओषधिम् अद्यात्?
   (ङ) कामलार्ताय रोगिणे किम् औषधं निर्दिष्टम्?
   (च) उदरगुल्म–रोगी किम् औषधं पिबेत्?
   (छ) कः सर्वदा अरोगः भवति?
2. **'क' स्तम्भस्य श्लोकपंक्तिभि : 'ख' स्तम्भस्य पङ्क्तीः मेलयत**

'क' स्तम्भः	*'ख' स्तम्भः*
(क) दाता समः सत्यपरः क्षमावान्	(क) उच्चैर्वदतोऽभिहतः स्वरः।
(ख) नीलोत्पलं तामलकीम्	(ख) प्रमेहार्तः पुनर्नवः।
(ग) मूलकल्कं पिबेद् दध्ना	(ग) त्रैफलेन रसेन वा।
(घ) कुम्भस्य चूर्णं सक्षौद्रम्	(घ) त्रायमाणां दुरालभाम्।
(ङ) शिलाजतुतुलामद्यात्	(ङ) आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।
(च) पिबेत् पयांसि यस्य	(च) मधुरेणाश्मभेदनम्।

3. अधः पाठे प्रदत्तरोगाणां नामानि लिखितानि। मञ्जूषातः अर्थान् चित्वा रोगसमक्षं लिखत

रोगनामानि	*अर्थाः*
(क) कामलार्तः	____________
(ख) ज्वरदाहः	____________
(ग) उच्चैर्वदतोऽभिहतः स्वरः	____________
(घ) गुल्मानाहार्तिः	____________
(ङ) मधुमेहः	____________
(च) प्रमेहः	____________
(छ) रोगराजः	____________
(ज) अश्मरोगः	____________

मञ्जूषा

पत्थरी का रोग, शक्कर का रोग (Diabtcse), पीलिया, यक्ष्मा, उच्चज्वरताप, शर्करारोग, पेट में गोल हो जाना, तिल्ली–वृद्धि से होने वाली पीड़ा, जुबान में लड़खड़ाहट।

4. अधः रोगनामानि अधीत्य पाठे प्रदत्तम् ओषधिं कोष्ठकेषु पूरयत

(क) कामलार्तः
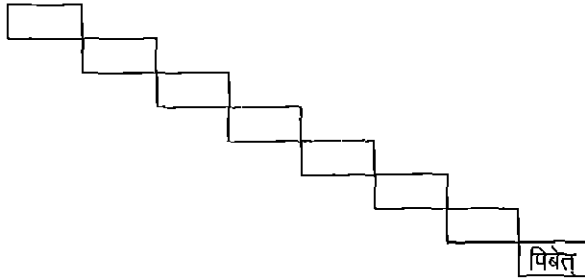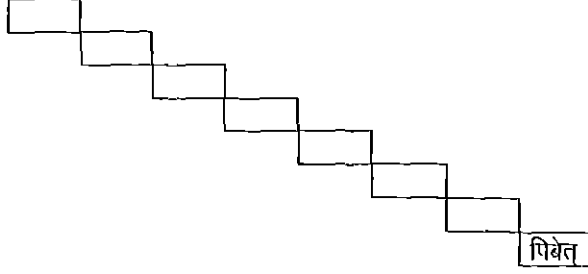
(ग) उदरगुल्मरोगी
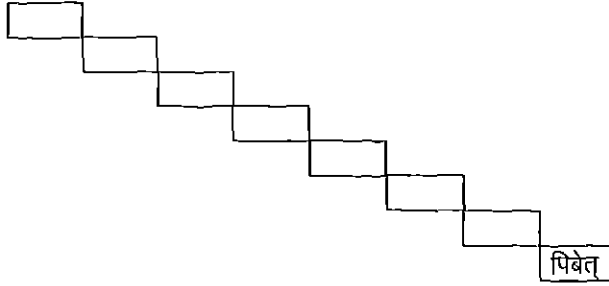
(घ) यक्ष्मारोगी
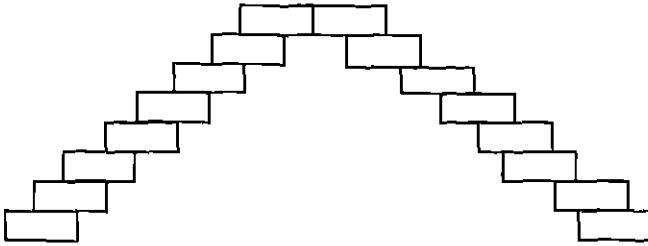
एतदोषधीः कल्कीकृत्य पक्वेन घृतेन गृह्णीयात्।

5. अधोलिखितपदेषु रिक्तस्थानपूर्तिं विधाय सन्धिं/सन्धिच्छेदं कुरुत

(क) पिबेत् + चूर्णम् – ________

(ख) प्रातः + ________ – प्रातर्मधुरयुतम्

(ग) विषयेषु + असक्तः – ________

(घ) ________ + ________ – भवत्यरोगः

(ङ) ________ + उच्चैः – यस्योच्चैः

(च) नील + उत्पलम् – ________

(छ) पुनः + नवः – ________

6. अधः रेखाङ्कितपदेषु का विभक्तिः कस्मिन् वचने च प्रयुक्ता इति निर्दिशत

(क) अभिनवे कर्परे कटुकां पिष्ट्वा पाचयेत्। (________)

(ख) मधुरैः सह पयांसि पिबेत्। (________)

(ग) मधुमेहित्वम् आपन्नः भिषग्भिः परिवर्जितः। (________)

(घ) मधुरेण दध्ना मूलकल्कं पिबेत् (________)

(ङ) कुम्भस्य चूर्णं शीतवारिणा पिबेत्। (________)

(च) निम्बस्य रसं प्रातः मधुयुतं कामलार्ताय योजयेत्। (________)

(छ) नित्यं हिताहारविहारसेवी ______ समीक्ष्यकारी। (________)

अष्टमः पाठः

लवकौतुकम्

प्रस्तुत पाठ करुणरस के अनुपम चितेरे महाकवि भवभूतिविरचित "उत्तररामचरितम्" नामक प्रसिद्ध नाटक के चतुर्थ अंक से संकलित किया गया है। राजा राम द्वारा निर्वासिता भगवती सीता के यमल पुत्रों लव एवं कुश का महर्षि वाल्मीकि के द्वारा पालन-पोषण किया गया, उन्हें शस्त्रों एवं शास्त्रों को शिक्षा दी गई तथा स्वरचित रामायण के सस्वर गान का अभ्यास कराया गया। महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में अतिथि रूप में पधारे राजर्षि जनक, कौसल्या एवं अरुन्धती खेलते हुए बालकों के बीच एक बालक में राम एवं सीता की छाया देखते हैं। वे उन्हें बुलाकर गोद में बिठाकर वात्सल्य की वर्षा करती हैं। इतने में ही चन्द्रकेतु द्वारा रक्षित राजा राम का अश्वमेधीय अश्व आश्रम में प्रवेश करता है। नगरीय अश्व को देखकर आश्रम के बालकों में कौतूहल उत्पन्न होता है। वे उसे देखने के लिए लव को भी बुला लाते हैं। लव घोड़े को देखते ही जान जाते हैं कि यह अश्वमेधीय घोड़ा है। रक्षकों की घोषणा सुनकर बालक लव घोड़े को आश्रम में ले जाकर बाँधने का आदेश देते हैं। इसका अत्यंत मार्मिक चित्रण इस पाठ में हुआ है।

(नेपथ्ये कलकलः। सर्वे आकर्णयन्ति)

जनकः : अये, शिष्टानध्याय इत्यस्खलितं खेलतां वटूनां कोलाहलः।

कौसल्या : सुलभसौख्यमिदानी बालत्वं भवति। अहो, एतेषां मध्ये क एष रामभद्रस्य मुग्धललितैरङ्गैर्दारकोऽस्माकं लोचने शीतलयति?

अरुन्धती : कुवलयदलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो
वटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियैव सभाजयन्।
पुनरपि शिशुर्भूतो वत्सः स मे रघुनन्दनो
झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृताञ्जनम्।।1।।

जनकः : (चिरं निर्वर्ण्य) भोः किमप्येतत्।
महिम्नामेतस्मिन् विनयशिशिरो मौग्ध्यमसृणो
विदग्धैर्निर्ग्राह्यो न पुनरविदग्धैरतिशयः।
मनो मे संमोहनस्थिरमपि हरत्येष बलवान्
अयोधातुं यद्वत्परिलघुरयस्कान्तशकलः।।

लवः : (प्रविश्य, स्वगतम्) अविज्ञातवयः क्रमौचित्यात् पूज्यानपि सतः कथमभिवादयिष्ये? (विचिन्त्य) अयं पुनरविरुद्धप्रकार इति वृद्धेभ्यः श्रूयते। (सविनयमुपसृत्य) एष वो लवस्य शिरसा प्रणामपर्यायः।

अरुन्धतीजनकौ : कल्याणिन् ! आयुष्मान् भूयाः।

कौसल्या : जात ! चिरं जीव।

अरुन्धती : एहि वत्स ! (लवमुत्सङ्गे गृहीत्वा आत्मगतम् दिष्ट्या न केवलमुत्सङ्गश्चिरान्मनोरथोऽपि मे पूरितः)

कौसल्या : जात ! इतोऽपि तावदेहि। (उत्सङ्गे गृहीत्वा) अहो, न केवलं मांसलोज्ज्वलेन देहबन्धनेन, कलहंसघोषघर्घरानुनादिना स्वरेण च रामभद्रमनुसरति। जात ! पश्यामि ते मुखपुण्डरीकम्। (चिबुकमुन्नमय्य, निरूप्य, सवाष्पाकूतम्) राजर्षे ! किं न पश्यसि ? निपुणं निरूप्यमाणो वत्साया मे वध्वा मुखचन्द्रेणापि संवदत्येव।

जनकः : पश्यामि, सखि ! पश्यामि। (निरूप्य)
वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते,
संवृत्तिः प्रतिबिम्बितेव निखिला सैवाकृतिः सा द्युतिः।
सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ
हा हा देवि किमुत्पथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति।।

कौसल्या : जात ! अस्ति ते माता ? स्मरसि वातातम्?

लवः : नहि।

कौसल्या : ततः कस्य त्वम् ?

लवः : भगवतः सुगृहीतनामधेयस्य बाल्मीकेः।

कौसल्या : अयि जात ! कथयितव्यं कथय।

लवः : एतावदेव जानामि।
(प्रविश्य सम्भ्रान्ताः)

बटवः : कुमार ! कुमार ! अश्वोऽश्व इति कोऽपि भूत-विशेषो जनपदेष्वनुश्रूयते, सोऽयमधुनाऽस्माभिः स्वयं प्रत्यक्षीकृतः।

लवः : 'अश्वोऽश्व' इति नाम पशुसमाम्नाये सांग्रामिके च पठ्यते, तद् ब्रूत—कीदृश?

बटवः : अये, श्रूयताम्— 'पश्चात्पुच्छं वहति विपुलं तच्च धूनोत्यजस्रम्
दीर्घग्रीवः स भवति, खुरास्तस्य चत्वार एव।
शष्पाण्यत्ति, प्रकिरति शकृत् पिण्डकानाम्र-मात्रान्। किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि याम। (इत्यजिने हस्तयोश्चाकर्षति)

लवः : (सकौतुकोपरोधविनयम्।) आर्याः! पश्यत। एभिर्नीतोऽस्मि। (इति त्वरितं परिक्रामति।)

अरुन्धतीजनकौ : महत्कौतुकं वत्सस्य।

कौसल्या : अरण्यगर्भैरुपालापैर्यूयं तोषिता वयं च। भगवति! जानामि तं पश्यन्ती वञ्चितेव। तस्मादितोऽन्यतो भूत्वा प्रेक्षामहे तावत् पलायमानं दीर्घायुषम्।

अरुन्धती : अतिजवेन दूरमतिक्रान्तः स चपलः कथं दृश्यते (प्रविश्य)

बटवः : पश्यतु कुमारस्तावदाश्चर्यम्।

लवः : दृष्टमवगतं च। नूनमाश्वमेधिकोऽयमश्वः।

बटवः : कथं ज्ञायते ?

लवः : ननु मूर्खाः ! पठितमेव हि युष्माभिरपि तत्काण्डम्। किं न पश्यथ ? प्रत्येकं शतसंख्याः कवचिनो दण्डिनो निषङ्गिणश्च रक्षितारः। यदि च विप्रत्ययस्तत्पृच्छत।

बटवः : भो भोः! किंप्रयोजनोऽयमश्वः परिवृतः पर्यटति?

लवः : (सस्पृहमात्मगतम्) 'अश्वमेध' इति नाम विश्व-विजयिनां क्षत्रियाणामूर्जस्वलः सर्वक्षत्रपरिभावी महान् उत्कर्षनिकषः।

(नेपथ्ये)

योऽयमश्वः पताकेयमथवा वीरघोषणा।
सप्तलोकैकवीरस्य दशकण्ठकुलद्विषः।।

लवः : (सगर्वम्)। अहो! संदीपनान्यक्षराणि।

बटवः : किमुच्यते? प्राज्ञः खलु कुमारः।

लवः : भो भोः! तत्किमक्षत्रिया पृथिवी? यदेवमुद्-घोष्यते?

(नेपथ्ये)

रे, रे, महाराजं प्रति कः क्षत्रियः?

लवः : धिग् जाल्मान्।
यदि नो सन्ति सन्त्येव, केयमद्य विभीषिका।
किमुक्तैरेभिरधुना, तां पताकां हरामि वः।।
हे बटवः! परिवृत्य लोष्ठैरभिघ्नन्त उपनयतै-
नमश्वम्।
एष रोहितानां मध्येचरो भवतु।
(प्रविश्य सक्रोधः)

पुरुषः : धिक्‌चपल! किमुक्तवानसि ? तीक्ष्णतरा ह्यायुधश्रेणयः शिशोरपि दृप्तां वाचं न सहन्ते। राजपुत्रश्चन्द्रकेतुर्दुर्दान्तः, सोऽप्यपूर्वारण्यदर्शनाक्षिप्तहृदयो न यावदायाति, तावत् त्वरितमनेन तरुगहनेनापसर्पत।

बटवः : कुमार ! कृतं कृतभश्वेन। तर्जयन्ति विस्फारितशरासनाः कुमारभायुधीयश्रेणयः।
दूरे चाश्रमपदम्। इतस्तदेहि। हरिणप्लुतैः पलायामहे।

लवः : किं नाम विस्फुरन्ति शस्त्राणि?
(इति धनुरारोपयति)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

शिष्टानध्यायः – शिष्टेषु (आप्तेषु) अनध्यायः शिष्टागमनप्रयुक्तोऽनध्यायः। बड़े लोगों के आने पर अवकाश।

अस्खलितम् – अनियन्त्रितम्, बेरोकटोक।

सुलभसौख्यम् – सुलभं सौख्यमस्मिन्। इसमें (बचपन में) सुख सुलभ होता है।

मुग्धललितैः – मुग्धैः मनोहरैः ललितैः – सुकुमारैः।

कुवलयदलस्निग्ध– श्यामः	–	कुवलयम् – नीलकमलम्, तस्य दलम् – पत्रम्। तस्य इव स्निग्धः – मसृणः श्यामः – कृष्णवर्णः। नील कमल – दल के समान स्निग्ध (चिक्कन) तथा श्यामवर्ण।
शिखण्डकमण्डनः	–	काकपक्षशोभितः। काकपक्षों (घुँघराले बालों) से अलङ्कृत।
पुण्यश्रीकः	–	पुण्या - अलौकिकी श्रीः - शोभा यस्य। अलौकिक शोभासंपन्न।
दृशोरमृताञ्जनम्	–	दृशोः - नेत्रयोः, अमृताञ्जनम् – अमृतमयम् अञ्जनम्, आँखों में अमृतमय अञ्जन।
विनयशिशिरः	–	विनयेन – विनम्रतया, शिशिरः – शीतलः। विनय से शीतल (महिम्नामतिशयः का विशेषण)।
मौग्ध्यमसृणः	–	मौग्ध्येन– मधुरस्वभावतया, मसृणः – कोमलः सर्वभावुकजनस्पृहणीयः। मधुर स्वभाव के कारण कोमल, स्पृहणीय।
विदग्धैः	–	सूक्ष्ममतिभिः। विवेकियों के द्वारा।
संमोहस्थिरम्	–	संमोहेन – शोकाधातेन, स्थिरम् – जडीभूतमिव, सीता निर्वासन के कारण शोकाघात से संज्ञाशून्य सा-जड़।
अयस्कान्तशकलः	–	अयस्कान्तधातोः – चुम्बकस्य शकलः – अवयवः (लघुः), चुम्बक का छोटा-सा टुकड़ा।
अविज्ञातवयःक्रमौचित्यात्	–	अविज्ञातम् वयः क्रमौचित्यम् – अवस्था क्रम (आयु में छोटे बड़े का क्रम) का ज्ञान न होने से।
प्रणामपर्यायः	–	यथाक्रमं प्रणामपरंपरा। औचित्य क्रम के अनुसार प्रणाम।
उत्सङ्ग	–	यथाक्रोडः, गोद।
मांसलोज्ज्वलेन	–	मांसलेन – परिपुष्टेन बलवता उज्ज्वलेन – प्रकाशयुक्तेन, तेजस्विना। बलिष्ठ और तेजस्वी।

कलहंसघोषघर्घरानुनादिना– कलहंसस्य यो घोषः – शब्दः तस्य अनुनादिना – अनुकारिणा। मधुर कण्ठवाले हंस के स्वर का अनुकरण करने वाले (स्वर से)।

मुखपुण्डरीकम् – मुखमेव पुण्डरीकम् – श्वेतकमलम्, मुखरूपी कमल।

पुण्यानुभावः – पुण्यश्चासौ पवित्रः–प्रभावः, माहात्म्यम्, अनुभावः, पुण्य प्रभाव, "अनुभावः प्रभावे च सतां च मतिनिश्चये।"

अभिव्यज्यते – अभि + वि + अञ्ज् धातु + लट् (कर्मवाच्य), प्र. पु. ए. व., अभिव्यक्त होता है।

उत्पथैः – उन्मार्गैः। उन्मार्गों से।

पारिप्लवम् – चञ्चलम्।

पशुसमाम्नाये – पशुवर्गवर्णन परे शास्त्रे, पशुशास्त्र में।

सांग्रामिके – सङ्ग्रमिवर्णनपरे शास्त्रे, संग्रामशास्त्र में।

धूनोति – धूञ् + लट् + प्र. पु. ए. व. (स्वादिगण, श्नुविकरण), हिलाता रहता है।

अजस्रम् – निरन्तरम्, लगातार।

दीर्घग्रीवः – दीर्घा ग्रीवा यस्य सः, जिसकी गर्दन लंबी है।

प्रकिरति – प्र + कृक + लट् + प्र. पु. ए. व. (तुदादि, श विकरण), बिखेरता है। त्यागता है।

शकृत् – पुरीषम्। मल।

आम्रमात्रान् – आम्रफलतुल्यान्। आमफलों जैसा।

सकौतुकोपरोधविनयम् – कौतुकेन, उपरोधेन, विनयेन च सहितम्, कौतूहल, आग्रह और विनय के साथ।

अरण्यगर्भैरूपालापैः – अरण्यगर्भाणां – वननिवासिनां बालकानां रूपैः – शरीरसौष्ठवैः, आलापैः–वार्ताभिः। वनवासी बालकों के शरीर सौंदर्य और बात-चीत से।

पलायमानम्	—	परा + अय् + लट् — शानच् आदेश (धातु) "उपसर्गस्यायतो" परा के र को ल, दौड़ते हुए को।
दीर्घायुषम्	—	दीर्घम् आयुः यस्य सः दीर्घायुः, तम्। चिरायु को अश्वमेध यज्ञ संबंधी।
निषङ्गिणः	—	निषङ्गाः सन्ति येषाम् ते निषङ्गिणः। निषङ्ग+ इनि, पुँ. प्र. ब. व.। तरकसधारी।
विप्रत्ययः	—	संदेह, वि + प्रति + इण्धातु + अच् प्रत्यय।
ऊर्जस्वलः	—	ऊर्जोऽस्यारतीति ऊर्जस्वलः, ऊर्जस्+ वलच्। शक्तिशाली।
सर्वक्षत्रपरिभावी	—	समस्त (शत्रु) राजाओं को पराजित करने वाली।
उत्कर्षनिकषः	—	उत्कर्ष की कसौटी।
सप्तलोकैकवीरस्य	—	सप्तलोकेषु एकवीरस्य, सातों लोकों में एकमात्र वीर।
दशकण्ठकुलद्विषः	—	दशकण्ठस्य कुलं द्वेष्टि इति दशकण्ठकुल द्विट्—तस्य। रावण के कुल के द्वेषी।
सन्दीपनान्यक्षराणि	—	सन्दीपनाानि + अक्षराणि। ये अक्षर बड़े क्रोधोत्पादक हैं।
लोष्ठैः	—	ढेलों से।
अभिघ्नन्तः	—	अभि + हन् धातु + लट् (शतृ), पुं. प्र. ब. व., मारते हुए।
रोहितानाम्	—	मृगों के।
अपूर्वारण्य दर्शना क्षिप्तहृदयः	—	अपूर्वारण्यस्य दर्शनेन आक्षिप्तं हृदयं यस्य सः, बहुव्रीहि समास। अपूर्व वन की शोभा देखने में संलग्न मन वाले।
अपसर्पत	—	अप + सृप् + लोट् + म. पु. ब. व.। भाग जाओ।
विस्फारितशरासनाः	—	विस्फारितानि शरासनानि यैरते। बहुव्रीहि-समास। धनुषों को ताने हुए।

हरिणप्लुतैः – हरिणानां प्लुतैरिव प्लुतैः। हरिणों की भाँति कूदते हुए।

पलायामहे – भाग जाएँ। परा + अय् धातु + लट् + उ. पु. ब. व "उपसर्गस्यायतो" से परा के र को ल, भाग चलो।

विस्फुरन्ति – वि + स्फुर् + लट् + प्र. पु. ब. व., चमक रहे हैं।

आरोपयति – (धनुष) चढ़ाता है।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**

(क) एष पाठः कस्मात् नाटकात् संकलितः?

(ख) कः अस्य रचयिता?

(ग) नेपथ्ये कोलाहलं श्रुत्वा जनकः किं कथयति?

(घ) लवः कौशल्यां रामभद्रम् च कथमनुसरति?

(ङ) बटवः अश्वं कथं वर्णयन्ति?

(च) लवः कथं जानाति यत् अयम् आश्वमेधिकः अश्व?

(छ) राजपुरुषस्य तीक्ष्णतरा आयुधश्रेणयः किं न सहन्ते?

2. **रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत**

(क) अश्वमेध' इति नाम क्षत्रियाणाम् महान् उत्कर्षनिकषः।

(ख) हे बटवः। लोष्ठैः अभिघ्नन्तः उपनयत एनम् अश्वम्।

(ग) रामभद्रस्य एष दारकः अस्माकं लोचने शीतलयति।

(घ) उत्पथैः मम मनः पारिप्लवं धावति।

(ङ) अतिजवेन दूरमतिक्रान्तः स चपलः दृश्यते।

(च) विस्फारितशरासनाः आयुधीयश्रेणयः कुमारं तर्जयन्ति।

(छ) निपुणं निरूप्यमाणः लवः मुखचन्द्रेण सीतया संवदत्येव।

3. **अधोलिखितानि कथनानि कः कं प्रति कथयति?**

	कः	*कं प्रति*
(क) अस्ति ते माता? स्मरसि वा तातम्?	------	------
(ख) दिष्ट्या न केवलम् उत्सङ्गः मनोरथोऽपि मे पूरितः।	------	------
(ग) वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते।	------	------
(घ) भगवतः सुगृहीतनामधेयस्य वाल्मीकेः।	------	------
(ङ) सोऽयमधुनाऽस्माभिः स्वयं प्रत्यक्षीकृतः।	------	------
(च) इतोऽन्यतो भूत्वा प्रेक्षामहे तावत् पलायमानं दीर्घायुषम्।	------	------
(छ) धिक् चपल ! किमुक्तवानसि?	------	------

4. **सप्रसङ्गं व्याख्यां कुरुत**

(क) सर्वक्षत्रपरिभावी महान् उत्कर्षनिकषः।

(ख) *किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि याम।*

(ग) सुलभसौख्यमिदानी बालत्वं भवति।

(घ) झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृतांजनम् ?

5. **अधोलिखितवाक्यानां रिक्तस्थानपूर्ति निर्देशानुसारं कुरुत**

(क) क एष ______ रामभद्रस्य मुग्धललितैरङ्गैर्दारकोऽस्माकं लोचने ______ (क्रिया पदेन)

(ख) एष ______ में संमोहनस्थिरमपि मनः हरति। (कर्तृपदेन)

(ग) ______ ! इतोऽपि तावदेहि! (सम्बोधनेन)

(घ) 'अश्वोऽश्व' ______ नाम पशुसमान्नाये सांग्रामिके च पठ्यते। (सम्बोधनेन)

(ङ) अरुन्धतीजनकौ ______ वत्सस्य। (कर्मपदम्)

(च) दूरमतिक्रान्तः स चपलः कथं दृश्यते। (क्रियाविशेषणेन)

(छ) युष्माभिरपि तत्काण्डं ______ एव हि। (क्रियापदम्)

6. अधः समस्तपदानां विग्रहाः दत्ताः। उदहारणमनुसृत्य समस्तपदानि रचयत, समासनामापि च लिखत ______

उदाहरणम्– पशूनां समाम्नायः, तस्मिन् पशुसमाम्नाये – षष्ठी तत्पुरुष

(क) विनयेन शिशिरः – ______ ______

(ख) अयस्कान्तस्य (धातोः) शकलः – ______ ______

(ग) दीर्घा ग्रीवा यस्य सः – ______ ______

(घ) मुखम् एव पुण्डरीकम् – ______ ______

(ङ) पुण्यः चासौ अनुभावः – ______ ______

(च) न स्खलितम् – ______ ______

(छ) सन्दीपनानि अक्षराणि – ______ ______

7. अधोलिखितपारिभाषिकशब्दानां समुचितार्थेन मेलनं कुरुत

(क) नेपथ्ये	(क) प्रकटरूप में
(ख) आत्मगतम्	(ख) देखकर
(ग) प्रकाशम्	(ग) पर्दे के पीछे
(घ) निरूप्य	(घ) अपने मन में
(ङ) उत्सङ्गे गृहीत्वा	(ङ) प्रवेश करके
(च) प्रविश्य	(च) अपने मन मे
(छ) सगर्वम्	(छ) गोद में बिठा कर
(ज) स्वगतम्	(ज) गर्व के साथ

8. (क) अव्ययपदैः अधोलिखितानि वाक्यानि पूरयत

(क) ______ अनेन तरुगहनेन अपसर्पत।

(ख) किमुच्यते ? प्राज्ञः ______ कुमारः।

(ग) पश्यतु कुमारः ______ आश्चर्यम्।

(घ) अयं पुनरविरुद्धप्रकारः ______ वृद्धेभ्यः श्रूयते।

(ङ) सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावः ______ अस्मौ।

(ख) उपपदविभक्तिप्रयोगमनुसृत्य वाक्यद्वयं रचयत

(क) धिक् जाल्मान् (धिक्योगे द्वितीयाविभक्तिः प्रयुक्तः)

(क) ———————।

(ख) ———————।

(घ) कृतं कृतम् अश्वेन (कृतम्, अलम् (बस, रहने दो, अर्थ में) तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है।

(क) ———————

(ख) ———————

(ङ) अलम् विवादेन

(क) ———————

(ख) ———————

नवमः पाठः

पाणिनिकथा

प्रस्तुत पाठ सोमदेवभट्ट विरचित 'कथासरितसागर' के प्रथम लम्बक से उद्धृत है। इस पाठ में कहा गया है कि वर्तमान में अध्ययन-अध्यापन में प्रचलित पाणिनीय-व्याकरण के प्रवर्तक आचार्य पाणिनि के गुरु जी का नाम *वर्ष* था। पाणिनि आरंभ में मंदबुद्धि थे, किंतु हिमालय में जाकर तपस्या के द्वारा भगवान् शंकर को प्रसन्न कर इन्होंने नवीन-व्याकरण प्राप्त किया, जो *पाणिनीय-व्याकरण* के नाम से जाना जाता है। इस पाठ में यह भी कहा गया है कि पाणिनीय-व्याकरण के पूर्व ऐन्द्र व्याकरण प्रचलित था। किंतु महर्षि पाणिनि से शास्त्रार्थ में पराजित हो जाने से ऐन्द्र-व्याकरण पृथ्वी पर लुप्त ही हो गया।

अथ कालेन वर्षस्य शिष्यवर्गो महानभूत्।
तत्रैकः पाणिनिर्नाम जडबुद्धितरोऽभवत्।।1।।
न शुश्रूषापरिक्लिष्टः प्रेषितो वर्षभार्यया।
अगच्छत् तपसे खिन्नो विद्याकामो हिमालयम्।।2।।
तत्र तीव्रेण तपसा तोषितादिन्दुशेखरात्।
सर्वविद्यामुखं तेन प्राप्तं व्याकरणं नवम्।।3।।
ततश्चागत्य मामेव वादायाह्वयते स्म सः।
प्रवृत्ते चावयोर्वादे प्रयाताः सप्त वासराः।।4।।
अष्टमेऽह्नि मया तस्मिञ्जिते तत्समनन्तरम्।
नभःस्थेन महाघोरो हुङ्कारः शम्भुना कृतः।।5।।

तेन प्रणष्टमैन्द्रं तदस्मद् व्याकरणं भुवि।
जिताः पाणिनिना सर्वे मूर्खीभूता वयं पुनः।।6।।
अथ सञ्जातनिर्वेदः स्वगृहस्थितये धनम्।
हस्ते हिरण्यगुप्तस्य निधाय वणिजो निजम्।। 7।।
उक्त्वा तच्चोपकोशायै गतवानस्मि शङ्करम्।
तपोभिराराधयितुं निराहारो हिमालयम्।। 8।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

अथ	– इसके बाद।
कालेन	– समय से।
वर्षस्य	– वर्ष नामक गुरु का।
शिष्यवर्गः	– शिष्यसमूह।
जडबुद्धितरः	– अधिक मंदबुद्धि।
शुश्रूषापरिक्लिष्टः	– शुश्रूषया परिक्लिष्टः, सेवा से थका हुआ।
तपसे	– तपस्या करने के लिए।
वर्षभार्यया	– वर्षस्य भार्या वर्षभार्या, तया वर्ष की पत्नी ने।
तपसा	– तपस्या से।
तोषिताद्	– संतुष्ट किए गए से।
इन्दुशेखरात्	– भगवान् शंकर से।
सर्वविद्यामुखम्	– सर्वासां विद्यानां मुखम् इति, सभी विद्याओं के मुखस्वरूप।
वादाय	– शास्त्रार्थ के लिए।
आह्वयते स्म	– चुनौती दी।
प्रवृत्ते	– आरंभ होने पर।
प्रयाताः	– बीत गए।
सप्त वासराः	– सात दिन।
अह्नि	– दिन में।

तत्समनन्तरम्	–	उसके तुरंत बाद।
नभः स्थेन	–	आकाश में स्थित (ने)।
हुङ्कार	–	'हुम्' इस प्रकार का शब्द।
ऐन्द्रम्	–	इन्द्रविरचित व्याकरण।
मूर्खीभूताः	–	अमूर्खाः मूर्खाः भूता इति, मूर्ख हो गए।
सञ्जातनिर्वेदः	–	सञ्जातः निर्वेदः यस्य सः, दुःखी।
स्वगृहस्थितये	–	स्वस्य गृहं स्वगृहम् स्वगृहस्य स्थितिः स्वगृह-स्थितिः तस्यै। अपने घर के निर्वाह के लिए।
उपकोशा	–	वररुचि की धर्मपत्नी, पाणिनि के गुरु वर्ष के छोटे भाई उपवर्ष की पुत्री।
वणिजः	–	व्यापारी के।
निधाय	–	रखकर।
आराधयितुम्	–	आराधना के लिए।
निराहारः	–	आहार (भोजन) न करने का व्रत करता हुआ।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**
   (क) गुरोः वर्षस्य कः शिष्यः जडबुद्धितरः आसीत् ?
   (ख) वर्षभार्यया प्रेषितः विद्याकामः पाणिनिः तपसे कुत्र अगच्छत् ?
   (ग) पाणिनिना व्याकरणं कस्मात् प्राप्तम् ?
   (घ) अष्टमेऽहनि इन्द्रे जिते शम्भुना किं कृतम् ?
   (ङ) शिवस्य हुंकारेण भुवि किं प्रणष्टम् ?
   (च) शङ्करम् आराधयितुं कः पुनः हिमालयम् अगच्छत् ?
2. **रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं विरचयत**
   (क) अथ कालेन वर्षस्य शिष्यवर्गो महानभूत्।
   (ख) पाणिनिना सर्वविद्यामुखं व्याकरणं शिवात् प्राप्तम्।
   (ग) महाघोरः हुङ्कार शम्भुना कृतः।
   (घ) तेन भुवि ऐन्द्रं व्याकरणं प्रणष्टम्।

(ङ) तपोभिः शङ्करम् आराधयितुं पाणिनिः हिमालयं गतः।
(च) पाणिनिः स्वगृहस्थितये हिरण्यगुप्तस्य हस्ते धनम् न्यक्षिपत्।

3. **अधोलिखितेषु वाक्येषु रेखाङ्कितसर्वनामपदानि कस्मै प्रयुक्तानि**

(क) तेन प्रणष्टम् ऐन्द्रं व्याकरणं भुवि।
(ख) वयं सर्वे पुनः मूर्खीभूताः।
(ग) तत्र एकः जडबुद्धितरोऽभवत्।
(घ) तेन प्राप्तं व्याकरणं नवम्।
(ङ) सः वादाय माम् एव आह्वयते स्म।
(च) आवयोः वादस्य सप्तवासराः याताः।
(छ) अहं शङ्करम् आराधयितुं हिमालयं गतवान् अस्मि।

4. **विशेषणविशेष्यपदानां मेलनं कुरुत**

(क) सप्त	(क) हुङ्कारः
(ख) तोषितात्	(ख) शम्भुना
(ग) सर्वविद्यामुखम्	(ग) हिरण्यगुप्तस्य
(घ) महाघोरः	(घ) अहनि
(ङ) नभस्थेन	(ङ) वासराः
(च) अष्टमे	(च) पाणिनिः
(छ) वणिजः	(छ) इन्दुशेखरात्
(ज) स जातनिर्वेदः	(ज) व्याकरणम्

5. **अधोलिखितश्लोकानां रिक्तस्थानपूर्तिं कुरुत**

(क) न ________ प्रेषितो वर्षभार्यया।
अगच्छत् तपसे खिन्नो ________ हिमालयम्।।
(ख) तत्र तीव्रेण ________ तोषितादिन्दुशेखरात्।
________ तेन प्राप्तं व्याकरणम्।।
(ग) अथ ________ स्वगृहस्थितये धनम्।
हस्ते ________ निधाय वणिजो ________।।
(घ) ________ अहनि मया तस्मिन् तत्समनन्तरम्।

6. उदाहरणम् अनुसृत्य पदानां परिचयं दत्त

उदाहरणम् = *निर् + गम् + क्त = निर्गतः।*

(क) परिक्लिष्टः = ________ + ________ ।
(ख) प्रेषितः = ________ + ________ ।
(ग) खिन्नः = ________ + ________ ।
(घ) प्राप्तम् = ________ + ________ ।
(ङ) आगत्य = ________ + ________ ।
(च) प्रयातः = ________ + ________ ।
(छ) प्रणष्टम् = ________ + ________ ।
(ज) आराधयितुम् = ________ + ________ ।

7. मञ्जूषातः पदानि चित्वा पर्यायपदानि लिखत

पर्यायपदानि

(क) समयेन ________ ।
(ख) शङ्करात् ________ ।
(ग) सेवाखिन्नः ________ ।
(घ) गिरिराजम् ________ ।
(ङ) दिने ________ ।
(च) पृथिव्याम् ________ ।
(छ) तपस्याभिः ________ ।
(ज) आकाशस्थितेन ________ ।

मञ्जूषा
शुश्रूषापरिक्लिष्टः, नभःस्थेन, कालेन, हिमालयम्, तपोभिः, इन्दुशेखरात, भुवि, अहनि।

दशमः पाठः

लोकरक्षकः रामः

प्रस्तुत पाठ, अर्वाचीन संस्कृत वाङ्.मय की लब्धप्रतिष्ठा कवयित्री बालाम्बिका-रचित *'सुबोधरामचरितम्'* काव्य के बालकाण्ड से लिया गया है। इसमें सर्वलोकाभिराम मर्यादापुरुषोत्तम राम, विनय-रूप-शील आदि गुणों से संपन्न भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के जन्म, जातकर्मादिक पावन संस्कार-वर्णन के साथ-साथ यज्ञरक्षा, गाधिपुत्र विश्वामित्र से प्राप्त किए गए बला-अतिबला विद्याओं, दिव्य अस्त्रों, वनमार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाली ताड़का का वध तथा अपने अनुज सुमित्रापुत्र लक्ष्मण के साथ कुशिकनन्दन (विश्वामित्र) के आश्रम में पहुँचना आदि का सचित्र चित्रण है। इन श्लोकों में अनुष्टुप् छंद का प्रयोग है।

राजा दशरथः कृत्वा हयमेधं महाक्रतुम्।
ऋष्यशृङ्गं पुरोधाय पुत्रीयेष्टिमथाकरोत्।।1।।

यागाग्निमध्याद्देवांशः कश्चिदुत्थाय पूरुषः।
पायसं स्वर्णपात्रस्थं ददौ तस्मै महीभुजे।। 2।।

तस्मात्स्वीकृत्य सोऽप्येतन्निजपत्नीरपाययत्।
पीत्वा तद्राजपत्न्यस्ता अन्तर्वत्न्योऽभवन्द्रुतम्।। 3।।

संपूर्णे द्वादशे मासि कौसल्या सुशुभे दिने।
सर्वलोकावनोत्कण्ठं सुतं राममजीजनत्।। 4।।

तथैव पुत्रं कैकेयी भरतं भ्रातृवत्सलम्।
पुष्ये पुरुषशार्दूलमसूत गुणवत्तरम्।।5।।

अथ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ विनयाधिकशालिनौ।। 6।।
श्रुत्वा पंक्तिरथः पुत्रजननं मुदितस्ततः।
जातकर्मादिकं तेषां पुत्राणां कृतवांस्तदा।। 7।।
प्रवर्धमानेष्वेतेषु पूर्णिमाचन्द्रकान्तिषु।
सर्वलोकाभिरामेषु मुमुदे सोऽधिकं नृपः।।8।।
तस्मिन्नवसरे गाधिसूनुरागत्य भूमिपम्।
यज्ञरक्षणदक्षं मे रामं देहीत्ययाचत।। 9।।
प्रथमं दूयमानोऽपि वसिष्ठस्याज्ञया ततः।
कौशिकस्य करे राजा ददौ रामं सलक्ष्मणम्।।10।।
सलक्ष्मणाय रामाय मुनिर्विनयशालिने।
विद्यां बलामतिबलामस्त्राण्यप्युपदिष्टवान्।।11।
अथ मार्गं निरुन्धानां राक्षसीं ताटकाभिधाम्।
अवधीद्राघवस्तूर्णं प्रेरितः कौशिकेन सः।। 12।।
रघूद्वहं ससौमित्रिं मार्गे कुशिकनन्दनः।
कथाभिर्नन्दयन्प्रापदाश्रमं स्वं गतश्रमः।। 13।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

हयमेधम् – अश्वमेध को।
महाक्रतुम् – (महान् चासौ क्रतुश्च, महाक्रतुः, तम् कर्मधारय)। महायज्ञ।
ऋष्यशृङ्गम् – (महाराज दशरथ की पुत्री शान्ता के पति थे)। शृङ्गी ऋषि।
पुत्रीयेष्टिम् – पुत्रीयेष्टि यज्ञ (प्राचीन काल में पुत्र-प्राप्ति के लिए किया जाने वाला यज्ञ)।
पायसम् – खीर।
स्वर्णपात्रस्थम् – स्वर्ण-निर्मित बर्तन में रखे हुए।

अपाययत् – पिलाया।
पीत्वा – (पा पिब्) + क्त्वा, पी करके।
राजपत्न्यः – (कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा) राज्ञः पत्न्यः षष्ठी तत्पु., राजा की पत्नियाँ।
अन्तर्वत्न्यः – अन्तः अस्ति (गर्भः) यासां ताः, बहुव्रीहि समास "अन्तर्वत्पतिवत्योर्नुक्" इति नुगागमः। गर्भवती।
अभवन् – (भू + लङ् + प्र.पु.ब.व.), हुईं।
सर्वलोकावनोत्कण्ठम् – समस्त त्रिलोक की रक्षा के लिए उत्कण्ठित।
पुरुषशार्दूलम् – पुरुषों में श्रेष्ठ।
अजीजनत् – (जन् + णिच् + लुङ् + प्र.पु.ए.व.) पैदा की, जन्म दिया।
पुष्ये – पुष्य नक्षत्र में।
लक्ष्मणशत्रुघ्नौ – (लक्ष्मणश्च शत्रुघ्नश्च, द्वन्द्व समास) लक्ष्मण और शत्रुघ्न।
विनयाधिकशालिनौ – सौंदर्य, शील और गुणों में श्रेष्ठ।
अजनयत् – (जन् + णिच् + लङ् + प्र.पु.ए.व.) उत्पन्न किया।
श्रुत्वा – (श्रु + क्त्वा) सुनकर के।
पङ्क्तिरथः – दशरथ।
पुत्रजननम् – पुत्र जन्म को।
मुदितः – प्रसन्न होकर।
कृतवान् – (डुकृञ् + क्तवतु + प्र.ए.व.) किया।
पूर्णिमाचन्द्रकान्तिषु – पूर्णिमा के चंद्रमा के समान कांति वाले।
सर्वलोकाभिरामेषु – समस्त लोकों में सुंदर।
मुमुदे – (मुद् + लिट् + प्र. पु. ए. व.) प्रसन्न हुए।
नृपः – नॄन् पाति रक्षति इति नृपः। राजा (दशरथ)।
गाधिसूनुः – गाधेः सूनुः पुत्रः, षष्ठी तत्पु.। गाधि के पुत्र (विश्वामित्र)।
आगत्य – (आङ् + गम् + क्त्वा ल्यप्) आ करके।
यज्ञरक्षणदक्षम् – (यज्ञस्य रक्षणे दक्षः तम्, षष्ठी, सप्तमी तत्पुरुष, यज्ञ की रक्षा में प्रवीण।
देहि – (दा + लोट् + म. पु. ए. व.) दो।
अयाचत – (याच् + लङ् + प्र. पु. ए. व.) माँगा।
दूयमानः – (दू + कर्मवाच्य (य) शानच् + प्र.ए.व.) खिन्न होते हुए।

सलक्ष्मणम्	–	लक्ष्मणेन सहितः, लक्ष्मण के साथ।
उपदिष्टवान्	–	(उप + दिश् + क्तवत् + प्र.ए.व.), उपदेश दिया।
निरुन्धानाम्	–	अवरोध उत्पन्न करने वाली।
अवधीत्	–	(हन् वध + लङ् + प्र.पु.ए.व.), वध कर दिया।
राघवः	–	(रघु + अण् + प्र.ए.व.), राम।
कौशिकेन	–	(कुशिकस्य पुत्रः पुमान् कौशिकः तेन), कुशिक के पुत्र विश्वामित्र के द्वारा।
रघूद्वहम्	–	रघुवंश को वहन करने वाले, राम।
ससौमित्रिम्	–	(सुमित्रायाः पुत्रः पुमान् सौमित्रः (सुमित्रा + इञ्) सौमित्रिणा सह, ससौमित्रीः तम्), सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण के साथ।
कुशिकनन्दनः	–	कुशिकस्य नन्दनः षष्ठी तत्पुरुष।
नन्दयन्	–	(नन्द् + शतृ + प्र. ए. व.), आनन्दित करते हुए।
प्रापत्	–	प्र. आप् + लुङ् + प्र.पु.ए.व., पहुँचे।
गतश्रमः	–	गतः श्रमः यस्य सः, बहुव्रीहि समास, थकान रहित।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तराणि लिखत**
   - (क) राजा दशरथः कं पुरोधाय पुत्रीयेष्टिम् अकरोत् ?
   - (ख) कस्मात् उत्थाय देवांशः राज्ञे पायसं ददौ ?
   - (ग) राजा स्वपत्नीः किम् अपाययत् ?
   - (घ) रामं का अजीजनत् ?
   - (ङ) पुत्रजननं श्रुत्वा मुदितः राजा पुत्राणां किं कृतवान् ?
   - (च) गाधिसूनुः भूपतिं कीदृशं रामम् अयाचत ?
   - (छ) राघवः किं कुर्वन्तीं ताटकां राक्षसीम् अवधीत् ?
2. **रेखाङ्कितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत**
   - (क) कौशिकः रामलक्ष्मणौ कथाभिः नन्दयन् स्वाश्रमं प्राप्नोत्।
   - (ख) प्रथमं वसिष्ठस्य आज्ञया दूयमानोऽपि राजा विश्वामित्राय पुत्रौ ददौ।
   - (ग) सुमित्रा लक्ष्मणशत्रुघ्नौ अजनयत्।

(घ) राजा दशरथः पुत्रीयेष्टिम् अकरोत्।
(ङ) यज्ञमध्यात् उत्थाय कश्चित् पुरुषः महीभुजे पायसं ददौ।
(च) सर्वलोकाभिरामेषु स नृपः अधिकं मुमुदे।

3. **अधोलिखितवाक्यानि समुचितैः अव्ययपदैः पूरयत**
(क) श्रुत्वा पङ्क्तिरथः पुत्रजननं मुदितः __________।
(ख) तस्मात् स्वीकृत्य सः __________ एतत् निजपत्नीरपाययत्।
(ग) ऋष्यशृङ्गं पुरोधाय पुत्रीयेष्टिम् __________ अकरोत्।
(घ) जातकर्मादिकं तेषां पुत्राणां कृतवान् __________।
(ङ) अवधीत् राघवः __________ प्रेरितः कौशिकेन सः।
(च) ताः पीत्वा राजपत्न्यः __________ अन्तर्वत्न्यः अभवन्।

4. **पाठात् विचित्य (अधोदत्तपदानां) पर्यायवाचिपदानि लिखत**
(क) अश्वमेधम् __________।
(ख) यज्ञम् __________।
(ग) राज्ञे __________।
(घ) शीघ्रम् __________।
(ङ) तनयम् __________।
(च) नरसिंहम् __________।
(छ) दशरथः __________।
(ज) विश्वामित्रः __________।
(झ) लक्ष्मणः __________।

5. **विशेषणपदानां विशेष्यैः सह मेलनं कुरुत**

(क) हयमेधम्	(क) रामम्
(ख) स्वर्णपात्रस्थम्	(ख) राक्षसीम्
(ग) शुभे	(ग) दशरथः
(घ) भ्रातृवत्सलम्	(घ) लक्ष्मणशत्रुघ्नौ
(ङ) रूपशीलगुणोत्कर्षौ	(ङ) पायसम्
(च) मुदितः	(च) भरतम्
(छ) यज्ञरक्षणदक्षम्	(छ) महाक्रतुम्
(ज) ताटकाभिधां	(ज) दिने

6. उदाहरणमनुसृत्य पदानि रचयत

उदाहरणम् – उत् + स्था + ल्यप् = उत्थाय

(क) श्रु + क्त्वा =

(ख) कृ + क्तवत् =

(ग) मुद् + क्त =

(घ) प्र + वृध् + शानच् =

(ङ) आ + गम् + ल्यप् =

(च) दु + कर्मवाच्य + शानच् =

(छ) प्र + ईर् + क्त =

(ज) उप + दिश् + क्तवत् =

7. अधोलिखितसमस्तपदानां विग्रहं कुरुत

	समस्तपदानि	*विग्रहाः*	*समासनामानि*
(क)	गाधिसूनुः	____________	षष्ठीतत्पुरुषः
(ख)	लक्ष्मणशत्रुघ्नौ	____________	इतरेतरद्वन्द्वः
(ग)	गतश्रमः	____________	बहुव्रीहिः
(घ)	पुरुषशार्दूलम्	____________	कर्मधारयः
(ङ)	महाक्रतुम्	____________	कर्मधारयः
(च)	यज्ञरक्षणदक्षम्	____________	षष्ठी, सप्तमी तत्पुरुषः
(छ)	नृपः	____________	उपपदतत्पुरुषः
(ज)	दशरथः	____________	बहुव्रीहिः

8. सप्रसङ्गं व्याख्यां कुरुत

(क) ऋष्यशृङ्गं पुरोधाय पुत्रीयेष्टिमकरोत्।

(ख) कौशिकस्य करे राजा ददौ रामं सलक्ष्मणम्।

(ग) अथ मार्गं निरुन्धानां राक्षसीं ताटकाभिधाम्।

(घ) पायसं स्वर्णपात्रस्थं ददौ तस्मै महीभुजे।

(ङ) श्रुत्वा पङ्क्तिरथः पुत्रजननं मुदितस्ततः।

छन्द-परिचय

छन्द

श्लोक लिखते समय वर्णों की एक निश्चित व्यवस्था रखनी पड़ती है। यह व्यवस्था छंद या वृत्त कहलाती है।

वृत्त के भेद

प्रायः प्रत्येक श्लोक के चार भाग होते हैं, जो पाद या चरण कहलाते हैं। जिस वृत्त के चारों चरणों में बराबर अक्षर हो, वे समवृत्त कहलाते हैं। जिसके प्रथम और तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण अक्षरों की दृष्टि से समान हों, वे **अर्धसमवृत्त हैं**। जिसके चारों चरणों में अक्षरों की संख्या समान न हो, वे **विषगवृत्त** कहे जाते हैं।

गुरु-लघु व्यवस्था

छंद की व्यवस्था वर्णों पर आधारित रहती है मुख्यतः स्वर वर्ण पर। ये वर्ण छंद की दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं– **लघु एवं गुरु**। सामान्यतः ह्रस्व स्वर लघु होता है और दीर्घ स्वर गुरु। किंतु कुछ परिस्थितियों में ह्रस्व स्वर लघु न होकर गुरु माना जाता है। छंद में गुरु-लघु व्यवस्था का नियम इस प्रकार है–अनुस्वारयुक्त, दीर्घ, विसर्गयुक्त, तथा संयुक्त वर्ण के पूर्व का वर्ण गुरु होते हैं। शेष सभी वर्ण लघु होते हैं। छंद के किसी पाद का अंतिम वर्ण लघु होने पर भी आवश्यकतानुसार गुरु मान लिया जाता है–

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा।। –छन्दोमञ्जरी 1.11

गुरु एवं लघु के लिए अधोलिखित चिह्न प्रयुक्त होते हैं–

गुरु - ऽ अथवा ˘
लघु - । अथवा -

गण-व्यवस्था

तीन वर्णों का एक गण माना जाता है। गुरु-लघु के क्रम से गण आठ प्रकार के होते हैं–

भ - गण SII	य - गण ISS	म - गण SSS
ज - गण ISI	र - गण SIS	न - गण III
स - गण IIS	त - गण SSI	

भगण आदि गुरु, जगण मध्य गुरु तथा सगण अंत गुरु होते हैं।
यगण आदि लघु, रगण मध्य लघु और तगण अंत लघु होते हैं।।
मगण में गुरु और नगण में सभी वर्ण लघु होते हैं।

आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।। —**छन्दोमञ्जरी**

(क) वैदिक छन्द

वैदिक मन्त्रों में गेयता का समावेश करने के लिए जिन छंदों का प्रयोग हुआ है, उनमें गायत्री, अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् प्रमुख हैं।

1. गायत्री (आठ अक्षरों के तीन पादों वाला समवृत्त)

जिस छंद में तीन चरण हों और प्रत्येक चरण में आठ अक्षर हों तथा जिनमें पाँचवाँ लघु और छठा अक्षर गुरु हो, वह **गायत्री** छंद कहलाता है। अधोलिखित मन्त्र में गायत्री छंद है–

पावका नः सरस्वती,
वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धिया वसुः।।

2. अनुष्टुप् (आठ अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छंद में चार चरण हों और प्रत्येक चरण में आठ अक्षर हों, जिनमें पाँचवाँ अक्षर लघु तथा छठा अक्षर गुरु हो, सातवाँ अक्षर जिसके पहले और तीसरे चरण में गुरु हो, किन्तु दूसरे और चौथे चरण में लघु हो, वह **अनुष्टुप्** छंद कहलाता है।

उदाहरण— त्र्यम्बकं यजामहे
सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्'
मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।।

छंद की पूर्ति के लिए 'त्र्यम्बकं' को "त्रियम्बकं" पढ़ते हैं।

3. त्रिष्टुप् (ग्यारह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छंद में चार चरण हों और प्रत्येक चरण में ग्यारह अक्षर हों, वह **त्रिष्टुप्** छंद कहलाता है।

इस पुस्तक के प्रथम पाठ का निम्नलिखित मन्त्र त्रिष्टुप् छन्द में है-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया,
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति,
अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।
(श्वेत., उ. 2.4.6 तथा मुण्डक 3.1.1)

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रे-
ऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः
परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।
(मुण्डक. 3.2.8)

(ख) लौकिक छन्द

प्रस्तुत पुस्तक के अनेक पाठों में अनेक लौकिक छंदों का संकलन है। अतः संकलित छंदों के लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत है :

1. अनुष्टुप् (आठ अक्षरों वाला समवृत्त)

लक्षण- श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।
(श्रुतबोध. 10)

अनुष्टुप् छंद के चारों चरणों का पाँचवाँ वर्ण लघु, छठा वर्ण गुरु तथा

प्रथम एवं तृतीय चरण का सातवाँ वर्ण गुरु और द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का सातवाँ वर्ण लघु होता है।
इस पुस्तक का द्वितीयपाठ अनुष्टुप् छंद में है-

(i) यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।।

(ii) ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।
सुतं त्वमपि सम्राजं सेव पूरुमवाप्नुहि।।

2. इन्द्रवज्रा (त त ज ग ग) (ग्यारह वर्णों वाला समवृत्त)

लक्षण– स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।

–वृत्तरत्नाकर, 3/30

जिस छंद के प्रत्येक पाद में दो तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण क्रम से हों, वह इन्द्रवज्रा छंद होता है।

त	त	ज	ग	ग
ऽऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ	ऽ

स्वर्गच्युतानामिह जीवलोके
चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे।
दानप्रसङ्गो मधुरा च वाणी
देवार्चनं पण्डिततर्पणञ्च।।

3. उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग) (ग्यारहवर्णों का समवृत्त)

लक्षण– उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।

–वृत्तरत्नाकर, 3/31

जिस छंद के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण हों, वह उपेन्द्रवज्रा छंद होता है।

ज	त	ज	ग	ग
।ऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽ	ऽ

उदाहरण– त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव।।

4. उपजाति (ग्यारहवर्णों का समवृत्त)

लक्षण– अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम।।
–वृत्तरत्नाकर, 3/32

इसके प्रथम एवं तृतीय चरण उपेन्द्रवज्रा तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण इन्द्रवज्रा छंद के अनुसार है, जिससे यह उपजाति छंद है।

उदाहरण–	अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा	इन्द्रवज्रा
	हिमालयो नाम नगाधिराजः।	उपेन्द्रवज्रा
	पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य	इन्द्रवज्रा
	स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।	उपेन्द्रवज्रा

इसके प्रथम तथा तृतीय पाद इन्द्रवज्रा छन्द में हैं। द्वितीय तथा चतुर्थ पाद उपेन्द्रवज्रा छन्द में हैं।

5. वसन्ततिलका (त भ ज ज ग ग) (चौदह वर्णों वाला समवृत्त)
लक्षण– उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौ गः।
–वृत्तरत्नाकर, 3/78

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण जगण एवं दो गुरु वर्ण हों वह वसन्ततिलका छंद कहलाता है।
इस पुस्तक के पञ्चम पाठ का अधोलिखित श्लोक वसन्ततिलका छंद में है–

त	भ	ज	ज	ग	ग
SSI	SII	ISI	ISI	S	S

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।।

6. वंशस्थ (ज त ज र) (बारह वर्णों का समवृत्त)

लक्षण– जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।

–वृत्तरत्नाकर, 3/47

जिस छंद के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण एवं रगण हों, वह **वंशस्थ** छंद कहलाता है।

उदाहरण– ज त ज र
। S । S S । । S । S । S

न केवलं प्राणिवधो वधो मम
त्वदीक्षणाद् विश्वसितान्तरात्मनः
विगर्हितं धर्मधनैर्निबर्हणं
विशिष्य विश्वासजुषां द्विषामपि।।

7. शार्दूलविक्रीडित (म स ज स त त ग) (उन्नीस वर्णों वाला समवृत्त)

लक्षण– सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।
–छन्दोमंजरी, 2/19

जिस छंद के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण एवं एक गुरु वर्ण हों, वह **शार्दूलविक्रीडित** छन्द कहलाता है। इसमें बारहवें वर्ण के बाद पहली यति और उन्नीसवें अक्षर के बाद दूसरी यति होती है।

इस पुस्तक के तृतीय पाठ का अधोलिखित श्लोक शार्दूलविक्रीडित छंद में है–

म	स	ज	स	त	त	ग
SSS	।।S	।S।	।।S	SS।	SS।	S

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया,
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः,
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।।

8. **मालिनी (न, न, म, य, य)** (पन्द्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा दो यगण, हों, वह छंद **मालिनी** कहलाता है। इसमें पहली यति (विराम) आठवें वर्ण के बाद और दूसरी यति पन्द्रहवें वर्ण के बाद होती है।

संस्कृत में **लक्षण** एवं **उदाहरण**–

न	न	म	य	य
।।।	।।।	ऽ ऽ ऽ	। ऽ ऽ	। ऽ ऽ
ननम	यययु	तेयंमा	लिनीभो	गिलोकैः।

–वृत्तरत्नाकरः 3/84

न	न	म	य	य
सरसि/	जमनु/	विद्धं शै/	वलेना/	पि रम्यं
मलिन/	मपि हि/	मां शोर्ल/	क्ष्म लक्ष्मीं/	तनोति।
इयम/	धिकम/	नोज्ञा व/	ल्कलेना/	पि तन्वी
किमिव/	हि मधु/	राणां म/	ण्डनं ना/	कृतीनाम्।

–अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/20

9. **शिखरिणी (य म न स भ ल ग)** (सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिनके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा एक लघु और एक गुरु वर्ण हों, वह **शिखरिणी** छंद कहलाता है। छठे और सत्रहवें वर्ण के बाद इसमें यति होती है।

संस्कृत में **लक्षण** एवं **उदाहरण**–

य	म	न	स	भ	ल	ग
। ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ	।। ।	।।ऽ	ऽ।।	।	ऽ
रसैरु	द्रैश्छिन्ना	यमन	सभला	गःशिख	रि	णी।

–वृत्तरत्नाकरः, 3/90

उदाहरण– य म न स भ ल ग

अनाघ्रा/ तं पुष्पं/ किसल/ यमलू/ नं कर/ रु है

रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं,
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।

–अभिज्ञानशाकुन्तलम् 2/10

10. मन्दाक्रान्ता (म भ न त त ग ग) (सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

मगण, भगण, नगण, दो तगणों और दो गुरुओं से मन्दाक्रान्ता छंद होता है। इसमें चौथे अक्षर के बाद पहली यति, छठे अक्षर के बाद दूसरी यति तथा आठवें अक्षर के बाद तीसरी यति होती है।

संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

म	भ	न	त	त	ग ग
ऽ ऽ ऽ	ऽ । ।	। । ।	ऽ ऽ ।	ऽ ऽ ।	ऽ ऽ
मन्दाक्रा	न्ताम्बुधि	र स न	गैर्मो भ	नौतौ ग	युग्मम्

उदाहरण–

म	भ	न	त	त	ग	ग
ऽ ऽ ऽ	ऽ । ।	। । ।	ऽ ऽ ।	ऽ ऽ ।	ऽ	ऽ
धूमज्यो	तिःसलि	ल म रु	तां सन्नि	पातः क्व	मे	घः

सन्देशा/र्थाः क्वप/ टुकर/ णैः प्राणि/ भिः प्राप/ णीयाः।
इत्यौत्सु/क्यादप/ रिगण/ यन्गुह्य/ कस्तंय/ याचे
कामार्ता/हि प्रकृ/ तिकृप/ णा श्चेत/ नाचेत/ नेषु।।

–मेघदूतं पूर्वमेघः, 5

अलङ्कार

अलं करोति इति अलङ्कारः अलङ्कार वह है जो, अलङ्कृत करता है। लोक में जिस प्रकार आभूषण आदि शारीरिक शोभा की वृद्धि में सहायक होते हैं, उसी प्रकार काव्य में **अनुप्रास**, **उपमा**, **रूपक** आदि उसकी चारुता की अभिवृद्धि करते हैं।

शब्दालङ्कार और *अर्थालङ्कार*

शब्द और अर्थ को काव्य का शरीर माना गया है। काव्य-शरीर का आलङ्करण भी शब्द एवं अर्थ दोनों ही रूपों में होता है। जो अलङ्कार केवल शब्द की चारुता की अभिवृद्धि करते हैं, वे शब्द पर आश्रित रहने के कारण शब्दालङ्कार कहे जाते हैं, जैसे– अनुप्रास, यमक आदि। जो अलङ्कार अर्थ की मनोहरता की अभिवृद्धि करते हैं, वे अर्थ पर आश्रित होने के कारण अर्थालङ्कार कहे जाते हैं, जैसे– उपमा, रूपक आदि। कुछ अलङ्कार ऐसे होते हैं, जो शब्द और अर्थ दोनों पर आश्रित रहते हैं, वे उभयालङ्कार कहे जाते हैं, जैसे- श्लेष।

अनुप्रास :

अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्। (साहित्यदर्पण)

स्वर की विषमता में भी शब्दसाम्य (वर्ण या वर्णसमूह की आवृत्ति) को अनुप्रास (अलङ्कार) कहते हैं।

अधोलिखित श्लोक में अनुप्रास अलङ्कार है-

वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति,
ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः
प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवङ्गाः।।

श्लेष :

श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते।

श्लिष्ट पदों के द्वारा अनेक अर्थों का अभिधान होने पर श्लेष (अलङ्कार) कहा जाता है।

उदाहरण–

प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि।।

यमक :

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।

–साहित्यदर्पण 10.8

जब वर्ण समूह की उसी क्रम से पुनरावृत्ति की जाए, किंतु आवृत्त वर्ण-समुदाय या तो भिन्नार्थक हो या अंशतः अथवा पूर्णतः निरर्थक हो, तो यमक अलङ्कार कहलता है।

उदाहरण–

प्रकृत्या हिमकोशाढ्यो दूर-सूर्यश्च साम्प्रतम्।
यथार्थनामा सुव्यक्तं हिमवान् हिमवान् गिरिः।।

इस श्लोक में हिमवान् शब्द की आवृत्ति हुई है और दोनों पद भिन्नार्थक हैं। अतः यहाँ पर प्रयुक्त अलङ्कार यमक है, जो श्लोक के सौंदर्य की अभिवृद्धि में सहायक है।

उपमा :

साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः।

एक वाक्य में दो (उपमेय और उपमान) के वैधर्म्य रहित सादृश्य को उपमा (अलङ्कार) कहते हैं।

इस पुस्तक के तृतीय पाठ के अधोलिखित श्लोक में उपमालङ्कार है-

ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।
सुतं त्वमपि सम्राजं सेव पूरुमवाप्नुहि।।

रूपक :

रूपकं रूपितारोपो विषये निरपह्नवे।

अनपह्नुत (न छिपाए गए) विषय (उपमेय) में विषयी (उपमान) का आरोप रूपक (अलङ्कार) कहा जाता है।

इस पुस्तक के पञ्चम पाठ के अधोलिखित श्लोक में रूपक अलङ्कार है–

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते न तु धनं विद्याविहीनः पशुः।।

उत्प्रेक्षा :

भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।

पर (उपमान) के द्वारा प्रकृत (उपमेय) की सम्भावना ही उत्प्रेक्षा (अलङ्कार) है

उदाहरण–

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता।।

अर्थान्तरन्यास :

सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि।
कार्यं च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते।।
साधर्म्येणेतरेणार्थान्तरन्यासोऽष्टधा ततः।

साधर्म्य अथवा वैधर्म्य के द्वारा, सामान्य का विशेष से, विशेष का सामान्य से, कार्य का कारण से और कारण का कार्य से जहाँ समर्थन होता है, वहाँ अर्थान्तरन्यास (अलङ्कार) है।

उदाहरण–

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः।।

अतिशयोक्ति :

सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।

अध्यवसाय के सिद्ध होने पर अतिशयोक्ति अलङ्कार होता है। अध्यवसाय का तात्पर्य है– उपमेय के निगरण के साथ उपमान से अभेद का आरोप अर्थात् उपमेय तथा उपमान में अभेद की स्थापना।

उदाहरण–

कथमुपरि कलापिनः कलापो विलसति तस्य तलेऽष्टमीन्दुखण्डम्।
कुवलययुगलं ततो विलोलं तिलकुसुमं तदधः प्रवालमस्मात्।।

व्याजस्तुति :

व्याजस्तुतिर्मुखे निन्दा स्तुतिर्वा रूढिरन्यथा

–काव्यप्रकाशः 112/168

प्रारंभ में निंदा अथवा स्तुति मालूम होती हो, परंतु उससे भिन्न (अर्थात् दीखने वाली निंदा का स्तुति में अथवा स्तुति का निंदा) में पर्यवसान होने पर व्याजस्तुति (अलङ्कार) होता है।

उदाहरण–

व्याजस्तुतिस्तव पयोद ! मयोदितेयं
यज्जीवनाय जगतस्तव जीवनानि
स्तोत्रं तु ते महदिदं घन! धर्मराज !
साहाय्यमर्जयसि यत्पथिकान्निहत्य।।

अनुशंसित ग्रंथ

क्र.सं.	ग्रन्थनाम		लेखक संपादक/प्रकाशक
1.	उपनिषद्	–	गीता प्रेस गोरखपुर,
2.	श्रीमद्भगवद्गीता	–	गीता प्रेस गोरखपुर
3.	अभिज्ञान–शाकुन्तलम्	कालिदास	राम नारायण लाल वेणी प्रसाद, इलाहाबाद
4.	कादम्बरी (शुकनासोपदेशः)	बाणभट्ट	नाग प्रकाशन जवाहरनगर, मल्कागंज दिल्ली–7
5.	नीतिशतकम्	भर्तृहरि	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, 1973
6.	पञ्चतन्त्रम्	विष्णु शर्मा	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 1978
7.	अष्टाङ्गहृदयम्	वाग्भट	नाग प्रकाशन जवाहरनगर मल्कागंज दिल्ली–7
8.	उत्तररामचरितम्	भवभूति	नाग प्रकाशन जवाहरनगर, मल्कागंज दिल्ली–7
9.	कथासरित्सागर	क्षेमेन्द्र	मोतीलाल बनारसी दास, 1970
10.	**SANSKRIT DRAMA In Its. origin. Development and Theory**	A.B. Keith	Oxford Press London 1924
11.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	बलदेव उपाध्याय	शारदा मंदिर वाराणसी 1973
12.	संस्कृत नाटक (हिन्दी अनुवाद)	ए.बी. कीथ. अनु. उदय भानुसिंह	मोती लाल बनारसीदास, दिल्ली
13.	वैदिक साहित्य और संस्कृत	बलदेव उपाध्याय	शारदा मंदिर वाराणसी
14.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	वाचस्पति गैरोला	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, 1973
15.	संस्कृत साहित्य की संक्षिप्त रूपरेखा	चन्द्र शेखर पाण्डेय	साहित्य निकेतन 1978 कानपुर 1964
16.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	डॉ. उमाशंकर शर्मा ऋषि	चौखम्बा भारती अकादमी, गोपाल मन्दिर लेन, वाराणसी, 1999

गांधी जी का जंतर

तुम्हें एक जंतर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आज़माओ :

जो सबसे गरीब और कमज़ोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।